यूको अनुगूँज

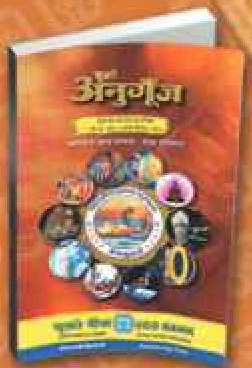

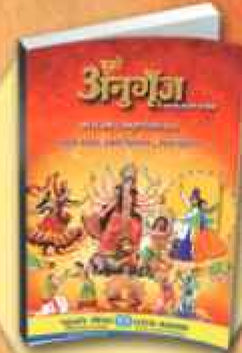

यूको बैंक की तिमाही हिंदी गृह पत्रिका

वर्ष-16, अंक-2, जुलाई-सितंबर 2025

भारतीय भाषाओं में अंतर्संबंध

यूको बैंक UCO BANK

(भारत सरकार का उपक्रम) (A Govt. of India Undertaking)

सम्मान आपके विश्वास का Honours Your Trust

कौन देस को वासी : वेणु की डायरी

परिचय

समकालीन व्यंग्य और कथा-साहित्य की विशिष्ट हस्ताक्षर डॉ. सूर्यबाला का जन्म 25 अक्तूबर, 1943 को वाराणसी की सांस्कृतिक धरती पर हुआ। वे शब्दों की उस बगिया में पलीं, जहाँ साहित्य और संगीत की सुरभि उनके पिता से विरासत में मिली। पुस्तकों से सजा पारिवारिक पुस्तकालय उनके लिए ज्ञान का अमूल्य खजाना बना। यहीं से उनके लेखन की लौ जली, जो समय के साथ तेजस्वी दीप बन गई।

उनकी आरंभिक शिक्षा वाराणसी में ही हुई और उन्होंने हिंदी साहित्य में एम.ए. तथा पी.एच.डी. की उपाधि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त की। ज्ञानयात्रा का शुभारंभ इन्होंने आर्य महिला विद्यालय में अध्यापन से किया।

1972 में उनकी पहली कहानी 'सारिका' पत्रिका में प्रकाशित हुई। 1975 में मुंबई पहुँचना जैसे रचना-कुंज में नवीन ऋतु का आगमन था। उसी वर्ष उनका पहला उपन्यास 'मेरे संधिपत्र' प्रकाशित हुआ, जो साहित्य-जगत में उनकी प्रभावशाली उपस्थिति का उद्घोष बना।

समकालीन कथा साहित्य में डॉ. सूर्यबाला की लेखनी एक सशक्त स्वरूप है, जो समाज, जीवन और आधुनिकता के समीकरण को न अंधश्रद्धा से बाँधती है न एकांगी विद्रोह से, बल्कि मुक्त और संतुलित दृष्टि प्रस्तुत करती है। उनकी 19 से अधिक कृतियाँ-पाँच उपन्यास, दस कथा-संग्रह, चार व्यंग्य-संग्रह, साथ ही डायरी और संस्मरण-साहित्यिक जगत की अमूल्य धरोहर है, जिनमें से अनेक शिक्षण पाठ्यक्रमों में सम्मिलित होकर युग-प्रतिभा की मान्यता पा चुकी हैं।

डॉ. सूर्यबाला की लेखनी की संपदा 150 से अधिक कहानियों, अनेक उपन्यासों, व्यंग्य-संग्रहों, संस्मरणों और बाल-साहित्य की अविरल धारा है। उनकी रचनाएँ देश-विदेश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई हैं और कई भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में अनूदित हुई हैं। उनकी कहानियाँ और व्यंग्य आकाशवाणी, दूरदर्शन और अंतरराष्ट्रीय मंचों पर प्रस्तुत किए गए हैं।

उन्हें प्रियदर्शिनी पुरस्कार, व्यंग्यश्री पुरस्कार, रत्नादेवी गोयनका वाग्देवी पुरस्कार, हरिशंकर परसाई स्मृति सम्मान, महाराष्ट्र साहित्य अकादमी का शिखर सम्मान और कई अन्य प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। वर्ष 2024 में कौन देस को वासी : वेणु की डायरी के लिए उन्हें 34वाँ व्यास सम्मान प्रदान किया गया, जो उनके साहित्यिक यश का गौरवशाली प्रतीक है।

प्रवासी भारतीय होना भारतीय समाज की महत्त्वाकांक्षा भी है, सपना भी है, कैरियर भी है और जब सब कुछ प्राप्त हो जाता है, तब स्मृतियों में डूब जाने वाला एक भावनात्मक द्वंद भी है। इस प्रवासीपन से कभी कभी हमें अपने आप को, अपने परिवेश को, अपने समाज को देखने की एक नई दृष्टि भी मिल जाती है।

भारतभूमि पर जन्मे व्यक्ति के लिए यह अनुभव और भी अधिक अर्थपूर्ण हो जाता है, क्योंकि हम अपनी सामाजिक परंपराओं, रूढ़ियों और इतिहास की जटिल परतों में इतने गहरे रचे-बसे होते हैं कि किसी अन्य देश के नागरिक की तुलना में स्वयं को देखने की हमारी दृष्टि बिल्कुल भिन्न होती है। हमारे इस देखने में आत्मावलोकन की प्रवृत्ति प्राय: क्षीण होती है-मानो हम किसी धुंधलके में झांक रहे हों। परंतु जब वही दृष्टि किसी विदेशी क्षितिज से लौटती है, तो वही धुंधलका पारदर्शी हो उठता है और उसके पार बसी अपनी पहचान अत्यंत स्पष्ट दिखाई देने लगती है।

सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. सूर्यबाला के इस उपन्यास में अमेरिका प्रवास में रह रहे वेणु और मेधा खुद को और अपने पीछे छूट गई जन्म भूमि को ऐसे ही देखते हैं। उन्हें अपनी मिट्टी की अबोली कसक प्राय: चुभती रहती है। वे अपने परिवार जनों और उनकी स्मृतियों को सहेजे जब स्वदेश प्रत्यावृत्त होते हैं तो उनकी परिकर परिधि में आए जन उनके रहन-सहन, आत्मविश्वास से प्रभावित होते हैं किन्तु वेणु और मेधा के दुख, उदासी और अकेलापन नेपथ्य में ही रहते हैं।

वेणु और उसकी माँ का संबंध इस कथा का वह सूरज है, जिसकी किरणें हर पृष्ठ पर उजास बिखेरती हैं। माँ की ममता और बेटे की संवेदनशीलता एक-दूसरे के मन की भाषा पढ़ने में जितनी सक्षम है, उतनी ही पाठक के हृदय को भी स्पर्श करती है। यह रिश्ता शब्दों से परे, आत्मा से आत्मा का संवाद है- एक ऐसा बंधन जो न दूरी से टूटता है, न समय से। यह उपन्यास माँ-बेटे के रिश्ते को एक ऐसी ऊँचाई पर ले जाता है जहाँ पाठक स्वयं उस ममता की छाँव में विश्राम करता है।

अमेरिका की धरती पर वेणु का पहला कदम जैसे किसी स्वप्नलोक में प्रवेश हो, लेकिन जल्द ही वह स्वप्न यथार्थ की कठोर चट्टानों से टकराता है। ठंडी रातें, अधपका खाना, जमीन पर सोना और आर्थिक संघर्ष- ये सभी उसकी आकांक्षाओं की अग्निपरीक्षा बन जाते हैं, परंतु वेणु का हौसला हिमालय की तरह अडिग है। वह हर कठिनाई को अपने आत्मबल से परास्त करता है और यही संघर्ष उपन्यास को हर उस युवा का, जो सीमित साधनों के साथ असीम सपनों को जीता है, का जीवंत दस्तावेज बना देता है।

लेखिका ने दो संस्कृतियों के बीच की खाई को इतनी बारीकी से उकेरा है कि पाठक स्वयं उस पुल पर चलने लगता है जहाँ भावनाएँ और यथार्थ आमने-सामने खड़े होते हैं। भारतीय संस्कृति की जड़ें-संवेदनाएँ, रिश्ते, त्याग और अपनापन, जब अमेरिका की व्यावहारिकता, अकेलेपन और अनवरत दौड़ से टकराती हैं, तो एक अंतहीन द्वंद्व जन्म लेता है। यही द्वंद्व उपन्यास की धड़कन बन जाता है, जो कभी वेणु की आँखों से बहता है, तो कभी उसकी माँ की चुप्पियों में गूंजता है।

इस उपन्यास की लेखनी इतनी सजीव है कि पाठक न केवल वेणु की यात्रा में शामिल होता है, बल्कि स्वयं भी एक आत्मयात्रा पर अपने ही अंत:देश की खोज में निकल पड़ता है, वह देश जो नक्शों में नहीं, भावनाओं में बसता है।

यह उपन्यास एक भावनात्मक वीणा है, जिसकी हर तार पर प्रवास, पीड़ा, प्रेम और पहचान की धुन बजती है। यह केवल एक कथा नहीं, बल्कि आत्मा की गहराइयों से निकली एक ऐसी पुकार है, जो शब्दों से नहीं, अनुभूतियों से रची गई है। डायरी की शैली में बुना गया यह उपन्यास, मन के उन कोनों में प्रवेश करता है जहाँ मौन भी बोलता है और भावनाएँ भीगती हैं। यह केवल एक उपन्यास नहीं जीवन दर्शन है जो बताता है कि वतन केवल एक भूगोल नहीं, एक भाव है, एक स्मृति, एक गंध, एक स्पर्श है, जो दिल में बसता है।

यूको
अनुगूँज

यूको बैंक की तिमाही हिंदी गृह पत्रिका
वर्ष-16, अंक-2
जुलाई-सितंबर 2025

संरक्षक
श्री अश्वनी कुमार
प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यपालक अधिकारी

प्रेरणा
राजेन्द्र कुमार साबू
कार्यपालक निदेशक

विजयकुमार निवृत्ति कांबले
कार्यपालक निदेशक

दिग्दर्शन
राजेश नागर
मुख्य महाप्रबंधक

घनश्याम परमार
महाप्रबंधक

संपादक
डॉ. हेमलता
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)

संपादक मंडल
सूरज कुमार
वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा)

प्रदीप कुमार महतो
वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा)

अनुक्रमणिका

विषय		पृष्ठ सं
प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यपालक अधिकारी का संदेश		2
कार्यपालक निदेशक का संदेश		3
कार्यपालक निदेशक का संदेश		4
मुख्य महाप्रबंधक का संदेश		5
महाप्रबंधक का संदेश		6
संपादकीय		7
आमुख लेख		
चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी	कीर्ति	8
उत्तर भारत की भाषाएँ एवं साहित्य	अनिल सलारिया	11
चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी	मनीष कुमार प्रियतम	15
हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं का सहसंबंध	ऋतु प्रकाश	16
सरकारी प्रयास- भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार में तकनीकी टूल्स का योगदान	कुमार संतोष	18
भारतीय भाषाएँ एवं स्थानीय पर्व-त्यौहार: राजस्थान के संदर्भ में	नम्रता सिंह	21
सरकारी प्रयास - भारतीय भाषा अनुभाग की स्थापना	अनुपम ज्योति	24
डिजिटल युग में भारतीय भाषाओं का पुनर्जागरण	अमृत रंजन	25
विविध		
त्यौहारों का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्व	अंकित गुप्ता	29
यात्रा वृत्तांत		
काशी से उज्जैन एवं ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग यात्रा	शम्भु कुमार	31
एक मुलाकात-डॉ. सोमा बंद्योपाध्याय		33
कविताएँ		
भाषायी एकता	विनीत कुमार	37
उड़ान	उषा कुमारी	
ए मेरी बिटिया सदैव बनी रहे तेरी मुस्कान	मोरेश्वर खापेकर	
पुस्तक समीक्षा		
ट्यूजडेज़ विद मॉरी - मित्र एल्बॉम	दीपिका सोनी	39
बाल वीथिका		41
भोजनम्		
परंपरा के स्वाद में लिपटा 'फरा'	अनुराधा कुशवाहा	42
विविध गतिविधियाँ		
प्रधान कार्यालय की गतिविधियाँ		44
अंचल कार्यालय/नराकास की गतिविधियाँ		46
पाठकीय प्रतिक्रिया		48

प्रकाशन सम्पर्क : यूको बैंक, राजभाषा विभाग, प्रधान कार्यालय, 10 बी टी एम सरणी, कोलकाता - 700001
ई-मेल : horajbhasha.calcutta@uco.bank.in, फोन: 033-48097729

इस अंक में प्रकाशित विचार संबंधित लेखकों के हैं, संपादक मंडल तथा यूको बैंक के नहीं।
इन विचारों से संपादक मंडल अथवा यूको बैंक की सहमति हो, यह आवश्यक नहीं है।
इन रचनाओं की मौलिकता का प्रमाण-पत्र लेखकों द्वारा दिया गया है।

प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यपालक अधिकारी का संदेश

''यदि आप किसी राष्ट्र की आत्मा को जानना चाहते हैं तो उसकी भाषा और साहित्य को पढ़िए।''

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन

भारत की भाषाएँ केवल संवाद का माध्यम नहीं, अपितु हमारी सांस्कृतिक चेतना, सामाजिक स्मृतियों और संवेदनाओं की जीवंत अभिव्यक्ति है। प्रत्येक भाषा अपने भीतर युगों की परंपराओं, जीवन मूल्यों और लोकबुद्धि का अमूल्य खजाना संजोए हुए है।

भारत विविध भाषाओं का संगम है, जहाँ हर भाषा अपनी विशिष्ट लय, स्वर और आत्मा के साथ एक साझा भारतीयता का मधुर संदेश देती है। यही भाषाई विविधता हमारी राष्ट्रीय एकता की सुदृढ़ नींव और हमारी सभ्यता की विशिष्ट पहचान है।

विविध भारतीय भाषाएँ हमें यह सिखाती है कि विविधता में ही एकता निहित है। जैसे अनेक नदियाँ विभिन्न दिशाओं से प्रवाहित होकर सागर में मिलती है, वैसे ही हमारी भाषाएँ भी विचारों और भावनाओं के माध्यम से एक विशाल सांस्कृतिक सागर का निर्माण करती हैं जो हम सभी को एक अदृश्य सूत्र में बाँधता है।

भाषा केवल शब्दों का संकलन नहीं, बल्कि यह मनुष्य की आत्मा का सेतु है। यह हमें जोड़ती है, समझने की दृष्टि देती है और अनुभवों के आदान–प्रदान के माध्यम से हमारे भीतर संवेदनशीलता का विस्तार करती है। जब हम किसी की भाषा में संवाद करते है, तो हम केवल शब्द नहीं बल्कि उनके हृदय के उद्गारों को सुनते हैं। यही भाव हमें सच्चे अर्थों में 'एक भारत' का अनुभव कराता है।

यूको बैंक परिवार इस एकता, समरसता और सम्मान की भावना को अपनी कार्य–संस्कृति में आत्मसात किए हुए है। हमारे ग्राहक, कर्मचारी और हितधारक देश के प्रत्येक कोने से आते हैं, विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं किंतु सबका उद्देश्य एक ही है : विश्वास, सेवा और प्रगति। हमारे बैंक की प्रत्येक शाखा, प्रत्येक कार्मिक इस भाषाई विविधता का सम्मान करता है और इसे अपनी सबसे बड़ी पूँजी मानती है।

मुझे विश्वास है कि 'अनुगूंज' का यह विशेषांक भारतीय भाषाओं के पारस्परिक संबंधों, उनकी आत्मीयता और सांस्कृतिकता पर एक सार्थक विमर्श प्रस्तुत करेगा। यह न केवल हमारी साझा सांस्कृतिक पहचान को सशक्त बनाएगा, बल्कि हमें यह भी स्मरण कराएगा कि भाषा के माध्यम से हम केवल अभिव्यक्त नहीं होते अपितु हम एक-दूसरे में आत्मसात होते हैं।

सभी पाठकों, सहयोगियों और संपादकीय टीम को हार्दिक शुभकामनाएँ।

अश्वनी कुमार

कार्यपालक निदेशक का संदेश

हिन्द देश के निवासी सभी जन एक हैं,
रंग रूप वेश भाषा चाहे अनेक हैं।

उपर्युक्त पंक्तियों में कवि ने भारत की भाषाई, सांस्कृतिक और सामाजिक विविधताओं के मध्य विद्यमान एकता को प्रभावशाली रूप से प्रतिपादित किया है। यद्यपि हम विभिन्न भाषाओं, वेशभूषाओं और परंपराओं से जुड़े हैं, फिर भी हमारी राष्ट्रीय चेतना, उद्देश्य और आवाज एक है।

भारतीय भाषाएँ **भाषा बदले, भाव न बदले** की वाहक है। विविध भाषाओं के संगम के मध्य भारत की प्रत्येक भाषा अपनी विशिष्टता के साथ राष्ट्रीय भाषायी एकता की सुदृढ़ नींव है। जिस प्रकार पहाड़ों से निकली एक नदी विविध नामों से विभिन्न स्थानों पर जानी जाती है और अंततः एक सागर में समाहित हो जाती है। उसी प्रकार प्रत्येक भारतीय भाषा एक-दूसरे से जुड़कर समृद्ध भारतीय संस्कृति का निर्माण करती है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि (बांग्ला), एम. टी. वासुदेवन नायर का कालम् (मलयालम), इलंगो अडिगल का शिलप्पदिकारम् (तमिल), यू. आर. अनंतमूर्ति का संस्कार (कन्नड़), गोवर्धनराम माधवराम त्रिपाठी का सरस्वतीचन्द्र (गुजराती), अमृता प्रीतम का कागज ते कैनवास (पंजाबी), वीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य का इयारुइंगम (असमिया), कालिंदीचरण पाणिग्रही का माटीर मणीष (ओड़िया), अमिताव घोष का द शैडो लाइन्स (अंग्रेजी), वी. एस. खांडेकर का ययाति (मराठी), बशीर बद्र की गजलें (उर्दू), महर्षि वाल्मीकि की रामायण, गोस्वामी तुलसीदास रचित श्रीरामचरित मानस आदि भारतीय साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, दार्शनिक के विविध रूप हैं। अभिवादन में भी नमस्ते, राम-राम, सत श्री अकाल, वणक्कम, नमस्कारम्, आदाब, खुरुमजरी, प्रणाम जैसे शब्द अपने-अपने क्षेत्रीय भाषाओं की सांस्कृतिक सुंगध को समेटे हुए है।

इन्हीं भिन्न-भिन्न भारतीय पुष्पों को यूको अनुगूंज पत्रिका ने अपना विषय बनाकर एक पुष्पगुच्छ का आकार दिया है जो परस्पर सौहार्द, समन्वय एवं एकता का परिचायक है। वर्तमान में विविध भारतीय भाषाओं को जानने, समझने और उनके साहित्य को पढ़ने की आवश्यकता है ताकि भावी पीढ़ियों तक भी देश की यह धरोहर सुरक्षित एवं ज्ञान के अतुलनीय भंडार के रूप में पहुंचाई जा सके।

राजभाषा कीर्ति पुरस्कार से सम्मानित यूको अनुगूँज नित नवोन्मेषी विषयों से निश्चित रूप से पाठकों के हृदय में स्थायी स्थान प्राप्त करेगी। भारतीय भाषाओं को समर्पित इस अंक के प्रकाशन हेतु विभाग को हार्दिक बधाई एवं भविष्य हेतु शुभकामनाएँ।

राजेन्द्र कुमार साबू

कार्यपालक निदेशक का संदेश

भाषा मानव सभ्यता एवं संस्कृति की संवाहक होती है। सभी भारतीय भाषाएँ अत्यंत समृद्ध हैं। हमारी सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति जिस सरलता से हमारी भाषाएँ करती हैं वह प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय है।

देश की एकता, अखंडता, प्रगति और सौहार्द के लिए भाषा की शक्ति का प्रयोग करना समीचीन है। हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में परस्पर सहभागिता है। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के परस्पर समन्वय ने भारत वर्ष को न केवल एकता के सूत्र में बांधा है अपितु विश्वपटल पर भी भारतीय संस्कृति का परचम लहराया है।

हमारे देश की भाषिक परंपरा का अवलोकन करने पर हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में जो अंतर्संबंध देखने को मिलता है वो हमें चमत्कृत करने वाला है। हिंदी में बही भक्ति साहित्य की गंगा में जहाँ हमें अवधी में 'श्रीरामचरित मानस' जैसा अनमोल रत्न मिलता है, वहीं बांग्ला में कृत्तिवास रचित 'श्री राम पंचाली', तमिल में कंबन कृत 'रामायण' के साथ भक्ति में सराबोर होने का अवसर भी मिलता है।

भारतीय भाषाओं में विद्यमान सामंजस्य या कहें कि समान भावों की अभिव्यक्ति, केवल भक्ति काल में ही नहीं अपितु भारतीय इतिहास के सभी काल खंडों में दृष्टिगोचर होती है। भारत एक बहु-भाषी देश है जहाँ लोग केवल अपनी मातृभाषा का ही सम्मान नहीं करते अपितु एकता के सूत्र में जोड़ने वाली समस्त भारतीय भाषाओं के सामने नतमस्तक होते हैं। भारतीय भाषाएँ हमारी संवेदनाओं को प्रश्रय देती हैं और हम इनमें अभिव्यक्ति करके और उसका रसास्वादन कर अपनी रचनात्मकता का परिष्कार करते हैं। यह आत्मिक संतोष का विषय है।

'यूको अनुगूंज' का यह अंक भारतीय भाषाओं के पारस्परिक संबंधों पर आधारित है। हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं के अंतर्संबंधों पर विशद विमर्श यहाँ किया गया है। पत्रिका का मुख्य विषय होने के कारण हमें भारतीय भाषाओं में परस्पर अंतर्संबंध के विविध आयामों को जानने का अवसर प्राप्त हुआ है।

हमारी हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएँ नए भारत की नई तस्वीर गढ़ने में सक्षम हैं। यह हमारे सांस्कृतिक गौरव को सदैव जीवंत रखेंगी और भारत हमेशा प्रगति के पथ पर निर्बाध बढ़ता रहेगा। हमें भी अपने सतत प्रयासों से अपने बैंक को शीर्ष पर लेकर जाना है और जैसा सुंदर सामंजस्य और समन्वय हमें हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में देखने को मिलता है वही सामंजस्य और समन्वय हमें अपने सहकर्मियों के साथ एक समूह के रूप में अपनाना है और प्रवाहमान नदी की भांति हमेशा आगे की ओर बढ़ना है।

आप सभी को बहुत - बहुत शुभकामनाएँ ।

विजयकुमार निवृत्ति कांबले

मुख्य महाप्रबंधक (राजभाषा) का संदेश

भारत एक बहुभाषी पुष्पवाटिका है, जहाँ हर भाषा एक सुरभित पुष्प की भाँति हमारी सांस्कृतिक विरासत की शोभा बढ़ाती है। देश की विभिन्न भाषाएँ न केवल जनजातीय इतिहास, परंपराओं और सांस्कृतिक विविधताओं की सजीव अभिव्यक्ति हैं, बल्कि वे भारत की बहुरंगी पहचान को एक सूत्र में बाँधने का कार्य करती है। 'यूको अनुगूंज' पत्रिका के इस अंक ने इन्हीं भाषाई पुष्पों को विषय बनाकर एक समरस पुष्पगुच्छ का रूप प्रदान किया है, जो सौहार्द, समन्वय और एकता का प्रतीक है। साहित्य की गहराइयों से लेकर सिनेमा की रंगभूमि और डिजिटल माध्यमों की गति तक भारतीय भाषाओं का प्रभाव हर क्षेत्र में सुस्पष्ट और प्रेरक रूप में दिखाई देता है।

विविधताओं के इस देश में प्रत्येक राज्य अपनी विशिष्ट भाषा, परंपरा, वेशभूषा, खान-पान और उत्सवों की सांस्कृतिक संपदा से समृद्ध है। ये भाषाएँ न केवल हमारे साहित्य, कला, संगीत और नृत्य को जीवंत बनाती है, बल्कि राष्ट्रीय एकता की भावना को भी सुदृढ़ करती है।

देश की आर्थिक संरचना में भाषा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, विशेषतः बैंकिंग क्षेत्र में, जहाँ संवाद की सहजता सेवा की गुणवत्ता को परिभाषित करती है। प्रत्येक ग्राहक अपनी मातृभाषा में सेवा प्राप्त करते हुए न केवल आत्मीयता अनुभव करता है, बल्कि विश्वास और संतोष की भावना भी विकसित होती है। इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु यूको बैंक द्वारा क्षेत्रीय भाषाओं पर आधारित पुस्तिका 'भाषा सेतुका' का प्रकाशन किया गया, जिससे प्रत्येक बैंककर्मी ग्राहकों से उनकी भाषा में संवाद कर सके। यह प्रयास बैंकिंग सेवा में समरसता, सुलभता और सशक्तता को बढ़ावा देते हुए व्यवसाय को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाने की दिशा में एक सराहनीय पहल है।

यूको अनुगूंज के इस अंक का मूल विषय भारतीय भाषाओं का अंतर्संबंध है, जो भारत की भाषाई विविधता में निहित एकता को उजागर करने वाला एक अत्यंत सारगर्भित और सृजनशील चयन है। इस उत्कृष्ट विषयवस्तु के लिए मैं राजभाषा विभाग को हार्दिक साधुवाद ज्ञापित करता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह अंक भारतीय भाषाओं की भावनात्मक गहनता, सांस्कृतिक समरसता और साहित्यिक गरिमा को सहृदय पाठकों के समक्ष इस प्रकार प्रस्तुत करेगा कि उनकी भाषाई संवेदना और अधिक प्रगाढ़ होगी। यह अंक न केवल भाषाओं के मध्य तात्त्विक संबंधों को रेखांकित करेगा, अपितु राष्ट्र की बहुभाषी आत्मा को भी एक सशक्त अभिव्यक्ति प्रदान करेगा।

मातृभाषा में हो संवाद, अपनी भाषा का हो सम्मान, यही है हमारी पहचान।

राजेश नागर

महाप्रबंधक (राजभाषा) का संदेश

बैंक की तिमाही गृह पत्रिका 'यूको अनुगूँज' की हमारी संवाद श्रृंखला में एक और पुष्प संघटित होने से विचारों का पुष्पहार निरंतर सुरभित हो रहा है। भारतीय भाषा एवं साहित्य की समृद्ध परंपरा को समर्पित इस नवीन अंक के माध्यम से हम न केवल अपनी भाषाई धरोहर का सम्मान कर रहे हैं, बल्कि साहित्य-संवर्धन के उस भाव को भी प्रगाढ़ कर रहे हैं जो हमारी संस्थागत संस्कृति का अभिन्न अंग है।

इन्हीं विचारों के पुष्पहार में राजभाषा हिंदी एक अनोखे कमल के रूप में विराजमान है, जो केवल एक भाषा नहीं, बल्कि हमारी सांस्कृतिक चेतना की जीवंत अभिव्यक्ति, विचारों की संवाहक और नवाचार की प्रेरक शक्ति है। यही वह सेतु है जो हमारी परंपरा, पहचान और प्रगति को एक सूत्र में जोड़ता है। राजभाषा के रूप में हिंदी का प्रगामी प्रयोग न केवल प्रशासनिक दक्षता को सुदृढ़ करता है, बल्कि संगठन और जनसामान्य के बीच आत्मीय संवाद का सशक्त माध्यम भी बनता है। हिंदी वह सूत्र है जो हमारी वाणी को राष्ट्र की भावना से जोड़ता है और कार्य-संस्कृति में एकता, सरलता और समरसता का संदेश देता है।

भारतीय भाषाएँ केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि नवाचार, समावेश और सशक्त प्रशासन की आधारशिला है। जब हम अपनी मातृभाषा में सोचते हैं, कार्य करते हैं, तो हम न केवल अपनी संस्कृति से जुड़ते हैं, बल्कि एक आत्मनिर्भर और सशक्त भारत की दिशा में कदम बढ़ाते हैं। भारतीय भाषाएँ हृदय से तकनीक तक की यात्रा का माध्यम बन चुकी हैं। आज भारत जीपीटी जैसे नवप्रयास यह प्रमाणित कर रहे हैं कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता अब भारत की विभिन्न भाषाओं में सोचने, समझने और संवाद करने लगी है। अनुवाद सारथी, कंठस्थ जैसे अभिनव मंच भाषा को तकनीकी अनुवाद की शक्ति प्रदान कर रहे हैं, वहीं शब्द सिंधु वैज्ञानिक शब्दावली को भाषाओं के संस्कार में ढालकर ज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने का अनुकरणीय कार्य कर रहा है।

अब अधिकांश वेबसाइट हिंदी तथा स्थानीय भाषाओं में डिफॉल्ट रूप से खुल रही हैं, जिससे प्रशासनिक कार्यों में हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं की भागीदारी बढ़ रही है। ई-गवर्नेंस, एआई और मशीन लर्निंग जैसे क्षेत्रों में भारतीय भाषाओं को सक्षम भाषा के रूप में विकसित किया जा रहा है। वह भाषा जो कभी केवल साहित्य की गलियों में गूंजती थी, आज डिजिटल मंचों, एआई चैटबॉट्स और ई-गवर्नेंस की आवश्यकता बन गई है।

आजादी के अमृत काल में 'अपनी भाषा, अपना देश' की संकल्पना को उत्कृष्टता, सृजनशीलता और संवेदनशीलता के साथ निरूपित करने का जो प्रयास यूको अनुगूँज की टीम ने किया है, वह निःसंदेह सराहना के योग्य, प्रेरणा का स्रोत और भारतीय भाषाओं के नवयुग का उद्घोष है।

भाषा की प्रगति-देश की प्रगति।

घनश्याम परमार

संपादकीय

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

अर्थात् हम सब एक साथ चलें, एक साथ संवाद करें; एक दूसरे के मन को जानें!

यूको बैंक की त्रैमासिक गृह पत्रिका 'यूको अनुगूंज' का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मैं अत्यंत आह्लादित हूं। यह वर्ष भारतीय अर्थव्यवस्था, व्यापार, डिजिटल नवोन्मेष और भाषायी प्रगति के लिए अभूतपूर्व उपलब्धियों का साक्षी रहा है। गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा राजभाषा विभाग की स्थापना का स्वर्ण जयंती समारोह मनाया गया। इस समारोह में शब्द सिंधु के अद्यतन संस्करण का विमोचन किया गया, जिसमें क्षेत्रीय भाषाओं की समृद्ध शब्द-संपदा को समाहित किया गया है। राजभाषा विभाग, भारत सरकार की 50वीं स्वर्ण जयंती वर्ष, देश भर में भाषायी एकता और समन्वय के संदेश को और सुदृढ़ करती रही।

इसी उत्सवधर्मी परिवेश में यूको बैंक की 'यूको अनुगूंज' पत्रिका को भारत सरकार द्वारा राजभाषा कीर्ति पुरस्कार (द्वितीय) से सम्मानित किया गया। साथ ही नराकास (बैंक), कोलकाता (संयोजक: यूको बैंक, प्रका) को नराकास राजभाषा सम्मान (द्वितीय) प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त नराकास के संयोजक कार्यालय के रूप में कार्यरत हमारे दो कार्यालयों को सर्वश्रेष्ठ प्रोत्साहन सम्मान और चार कार्यालयों को प्रशंसनीय प्रोत्साहन सम्मान प्रदान किया गया, जो हमारे संयुक्त प्रयासों की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

विकसित अर्थव्यवस्था के निर्माण में सक्रिय भागीदारी निभाते हुए, प्रतिष्ठित एवं विद्वतजनों के विचारों को 'विकसित भारत @2047' नामक पुस्तक के रूप में संकलित कर हिंदी दिवस के शुभ अवसर पर आप सभी के समक्ष प्रस्तुत किया गया। यह प्रकाशन न केवल हिंदी भाषा के गौरव का प्रतीक है, बल्कि विकसित भारत के राष्ट्रीय संकल्प को सशक्त आधार प्रदान करने वाला एक प्रेरणादायी एवं दूरदर्शी प्रयास भी है। यह हमें स्मरण कराता है कि भाषा जब प्रगति की धुरी से जुड़ती है, तो विकास का मार्ग और अधिक सुरक्षित, सुनिश्चित और समृद्ध हो जाता है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भाषा ने कलम और कागज के युग से लेकर कंप्यूटर की क्रांति तक अपनी विकास यात्रा को निरंतर आगे बढ़ाया है और आज यह यात्रा कृत्रिम बुद्धिमत्ता के अत्याधुनिक युग में प्रवेश कर चुकी है। इस डिजिटल दौर में भारतीय भाषाओं ने स्वयं को प्रगति के प्रत्येक चरण के अनुरूप सक्षम और सशक्त बनाया है। तकनीक को श्रेष्ठ साधन के रूप में अपनाते हुए, हमारी भाषाओं ने गाँव की चौपालों से लेकर वैश्विक मंच तक का उल्लेखनीय सफर तय किया है। भारतीय भाषाओं में उपलब्ध ई-पुस्तकें, ऑडियोबुक्स, पॉडकास्ट, ब्लॉग्स और सोशल मीडिया पर बढ़ती उपस्थिति स्पष्ट संकेत करती है कि भारतीय भाषाएँ अब केवल परंपरा की संरक्षक ही नहीं, बल्कि नवाचार की अग्रदूत भी बन चुकी हैं। आज देश की विविध भाषाएँ परस्पर पूरक बनकर साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और व्यावहारिक धरोहरों को साझा कर रही हैं। इसी समन्वय से भारतीय संस्कृति और अधिक समृद्ध एवं सशक्त बन रही है।

इन्हीं वैचारिक सूत्रों को आधार बनाकर प्रस्तुत यह अंक भारत की भाषाई संस्कृति के उस विराट चित्र को उकेरता है, जहाँ शब्द केवल संवाद नहीं, वरन् सभ्यता की श्वास बनकर बहते हैं। 'चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी' आलेख आपको यह अनुभूति कराएगा कि विविधता भारत का श्रृंगार है और एकता उसका आत्मविश्वास। उत्तर भारत की भाषाएं एवं साहित्य, हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में अंतर्संबंध तथा राजस्थान: पर्व-त्यौहार विषयक आलेख न केवल भाषा और संस्कृति की परस्परता को स्पष्ट करेंगे बल्कि यह भी दर्शाएंगे कि उत्सव हमारी बोली-बानी में कैसे रचे-बसे हैं। साथ ही, भाषा में तकनीकी टूल्स, भारतीय भाषा अनुभाग और डिजिटल युग में भारतीय भाषाओं का पुनर्जागरण आलेख यह उद्घोषणा करते प्रतीत होंगे कि तकनीक अब भारतीय भाषाओं की मित्र है, प्रतिस्पर्धी नहीं। त्यौहार का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्त्व आलेख त्यौहारों और व्यापार की जीवंत साझेदारी को दर्शाएगा, वहीं यात्रा वृत्तांत पाठकों को महाकाल और ओंकारेश्वर की दिव्य यात्रा से भाव-विभोर कर देगा।

डॉ. सोमा बंद्योपाध्याय, कुलपति महोदया के भाषायी एकता और अंतर्संबंधों पर आधारित विचार निश्चय ही आपके चिंतन को एक नई दृष्टि प्रदान करेंगे। वहीं ट्यूजडेज़ विद मॉरी (मिच एल्बॉम) की पुस्तक समीक्षा पाठकों को वैश्विक सरोकारों और मानवीय संवेदनाओं के उस संसार में ले जाएगी, जहाँ संवाद आत्मा का स्पर्श बन जाता है। इस अंक के अन्य स्तंभ जैसे बाल वीथिका, भोजनम्, अंचल और प्रधान कार्यालय की राजभाषा संबंधी गतिविधियाँ आपको इस तिमाही की रचनात्मक जानकारियों और विविध अनुभवों की एक समृद्ध झलक प्रदान करेंगे।

अंतिम स्तंभ में पाठकों की मूल्यवान पातियों ने सदैव हमारा मनोबल बढ़ाया है और भविष्य में भी आपके स्नेहिल विचारों और सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी। प्रकाशोत्सव की उजास से भरे इस समय में आप सभी को दीपावली, छठ पूजा एवं क्रिसमस पर्व की हार्दिक एवं मंगलमय शुभकामनाएँ।

डॉ. हेमलता

कीर्ति
वरिष्ठ प्रबंधक (संकाय)
स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, चंडीगढ़

चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी

आपने कभी सोचा है कि जब हम भारत में एक जगह से दूसरी जगह जाते हैं, तो सिर्फ लोग और परिदृश्य ही नहीं बदलते, बल्कि हमारी सुनने और स्वाद की चीजें भी बदल जाती हैं। जी हाँ, हमारी भाषा और यहाँ तक कि पानी का स्वाद भी हर क्षेत्र की भौगोलिक बनावट के अनुसार बदलता है। आज भारत में 22 आधिकारिक भाषाएँ और 19,500 से अधिक बोलियाँ हैं। भारत की इसी अद्भुत विविधता को एक पुरानी और बहुत ही प्रसिद्ध कहावत बखूबी बयां करती है :

चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी।

हालाँकि, यह मूल कहावत : "कोस-कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी" का एक लोक-भाषीय रूपांतर है, जिसका अर्थ समान है, पर दूरी को बदलकर कहा गया है। यह संस्करण उत्तर भारत के कुछ हिस्सों (विशेषकर राजस्थान, हरियाणा और बुंदेलखंड) में सुनने को मिलता है। वहीं उत्तर भारत (खासकर ब्रज, अवध, बिहार, राजस्थान) में "कोस-कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी" अधिक प्रचलित रही हैं। इसका प्रयोग लोक-कथाओं, कविताओं और लोकगीतों में हुआ है, जैसे - "हर गाँव की अपनी बोली, हर घाट का अपना पानी"। इस प्रकार, यह कहावत सिर्फ कुछ शब्दों का समूह नहीं है, बल्कि यह हमारे देश की भौगोलिक, सांस्कृतिक और सामाजिक विविधता का एक गहरा दर्शन है। आइए, इस कहावत के हर पहलू को गहराई से समझते हैं।

सबसे पहले हम इस कहावत या लोकोक्ति के दोनों रूपों की तुलनात्मक समीक्षा करते हैं, निम्नांकित तालिका इसके सूक्ष्म अंतर को आसानी से स्पष्ट करती है :

पहलू	"कोस-कोस पर बदले पानी, चार कोस पर वाणी"	"चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी"
प्रचलन क्षेत्र	ब्रज, अवध, बिहार, पूर्वी उत्तर भारत	राजस्थान, हरियाणा, बुंदेलखंड, पश्चिम भारत
मापन अनुपात	1:4 → पानी जल्दी बदलता, भाषा थोड़ी दूर बाद	4:8 → दोनों में दोगुनी दूरी का फर्क
अर्थ	पानी थोड़ी दूरी पर, भाषा कुछ दूरी पर बदलती है	पानी कुछ दूरी पर, भाषा उससे आगे बदलती है
सांस्कृतिक व्याख्या	भौगोलिक और भाषाई विविधता पर बल	भौतिक परिवर्तन पहले, सांस्कृतिक बाद में
संदेश	विविधता में एकता - भारत का सांस्कृतिक चमत्कार	भौतिक और सांस्कृतिक परतों का अंतर

चार कोस पर पानी बदले:

हर क्षेत्र की मिट्टी, चट्टानें, जलवायु और पर्यावरण अलग-अलग हैं। क्या आप जानते हैं कि पानी का स्वाद केवल उसमें घुले हुए खनिजों पर निर्भर करता है? ये खनिज पानी में घुल जाते हैं और उसके स्वाद और पीएच स्तर को बदल देते हैं।

▶ **राजस्थान:** यहाँ के पानी में लवणीयता अधिक होने के कारण स्वाद थोड़ा कड़वा या नमकीन होता है। यहाँ के लोगों ने इसी पानी के साथ जीवन जीना सीखा है। वे इससे बीमारी दूर करने वाले उपाय भी निकाल लेते हैं।

▶ **उत्तराखंड और हिमाचल:** पहाड़ों से निकलने वाला पानी खनिज से भरपूर होता है, जिस वजह से उसका स्वाद मीठा और ताजगी भरा लगता है। कई जगहों पर इस पानी को 'देवजल' का दर्जा दिया जाता है और आयुर्वेद में इसका औषधीय इस्तेमाल होता है।

▶ **पूर्वोत्तर भारत:** यहाँ के पानी में आयरन की मात्रा अधिक हो सकती है, जिससे उसका रंग और स्वाद भिन्न होता है। इन छोटी-छोटी भिन्नताओं में ही भारत का प्राकृतिक वैभव छुपा है।

अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय अध्ययन यह दर्शाते हैं कि पानी का पीएच स्तर, टीडीएस (टोटल डिजाल्व सॉलिड्स) और खनिजों की मात्रा हर 15-20 किलोमीटर पर बदल जाती है। विश्व स्वास्थ्य संगठन भी इस बात की पुष्टि करता है कि जल की गुणवत्ता और स्वाद, खनिज तथा जलवायु के आधार पर बदलते हैं और यह सिर्फ एक अनुमान नहीं है। इसरो के एक अध्ययन में यह पाया गया कि भारत में हर 20 किलोमीटर पर पानी के पीएच स्तर में अंतर होता है। यही कारण है कि यह कहावत सिर्फ कल्पना नहीं, बल्कि एक वैज्ञानिक सत्य है।

आठ कोस पर वाणी:

भारत की भाषाई विविधता अद्वितीय है। आठ कोस पर वाणी का अर्थ है-थोड़ी सी दूरी पर भाषा या बोली में अंतर आ जाता है। हर आठ कोस यानी लगभग 24 किलोमीटर पर एक नई बोली या लहजा सुनने को मिलता है।

▶ **दक्षिण भारत:** केरल में मलयालम, तमिलनाडु में तमिल, कर्नाटक में कन्नड़-हर राज्य की अपनी भाषा, लिपि और लहजा है।

▶ **पूर्वोत्तर:** यहाँ की जनजातीय भाषाएँ और बोलियाँ इतनी अलग हैं कि कई बार पड़ोसी गाँव के लोग भी एक-दूसरे की भाषा नहीं समझ पाते हैं।

▶ **हिंदी क्षेत्र:** हिंदी क्षेत्र को देखें तो केवल कुछ किलोमीटर की दूरी पर भी भाषा के लहजे, शब्दों के चयन और बोली में स्पष्ट अंतर दिखाई देता है। उदाहरण के लिए, **दिल्ली** में जब आप किसी से मिलते हैं तो सुनते हैं खावा है? यानी क्या खाया है? जो एक आत्मीय और सीधी-सादी मुहावरेदार पूछताछ है। यहाँ की वार्तालाप शैली स्पष्ट है, जो दिल्लीवासियों की व्यस्त जीवनशैली का प्रतिबिंब भी है।

वहीं, **लखनऊ**, जिसे नवाबों और नफासत का शहर कहा जाता है, वहाँ की भाषा में एक मिठास और नजाकत है। यहाँ आपको आमतौर पर मिलेगा 'कैसे छो'? यानी कैसे हो? जिसमें एक खास लिहाज और स्नेह छुपा होता है। यह सिर्फ जाने-पहचाने तक सीमित नहीं, बल्कि अजनबी से भी इसी विनम्रता से पूछा जाता है। लखनऊ की भाषा में तहजीब, अदब और भावना का समावेश रहता है, जो इस पूरे हिंदी क्षेत्र को अनूठा बनाता है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों में काय झाल? यानी क्या हुआ है? या कैसे हो? ज्यादातर सुनने को मिलता है। यहाँ की बोली अपनी खास लय और गँवुए अंदाज की पहचान है, जिसमें गर्व और सरलता झलकती है। यह बोली आम जीवन से जुड़ी छोटी-छोटी बातों में भी अपनी पहचान बनाए रखती है और क्षेत्रीय संस्कृति की जीवंत अभिव्यक्ति है।

हालाँकि, **बिहार** में आपको ज्यादातर का हाल-चाल? सुनाई देगा, जिसका अर्थ है आपकी कुशलता कैसी है? यहाँ की बोली में ही भोलेपन, आत्मीयता और गहराई छुपी होती है। बिहार की बोलियों में ठेठ बातचीत का अंदाज दिखता है, जो सामाजिक जीवन की गर्माहट को बढ़ा देता है। यहाँ के संगीत, कथाएँ और मुहावरे भी इस आत्मीयता की छाप लिए होते हैं।

मध्य प्रदेश के ग्रामीण और कुछ शहरी इलाकों में राम-राम सा यानी राम-राम, साहब का प्रयोग होता है, जो एक सम्मानजनक और धार्मिक आत्मीयता से भरा अभिवादन है। यहाँ की बोली में सबसे पहले पूजनीय देवता श्रीराम को याद करने का भाव है, जिससे आपसी संबंधों में सम्मान, स्नेह और शुभकामना की भावनाएँ झलकती हैं। यह अभिवादन न सिर्फ बोली, बल्कि स्थानीय जीवन-विचार, संस्कार और आस्था को भी दर्शाता है।

इन विविधताओं से स्पष्ट है कि हिंदी क्षेत्र की भाषा उतनी ही रंगीन और अनेकतापूर्ण है, जितना यहाँ का समाज। छोटी-सी दूरी पर ही शब्द, अभिवादन, उच्चारण, भाव-भंगिमा सब बदल जाती है।

अनेकता में एकता की विविधता हमारी संस्कृति को जीवंत बनाती है और हमें बताती है कि भाषा, यानी वाणी, सिर्फ बोलचाल का माध्यम नहीं, बल्कि संस्कृति, इतिहास, भावनाओं और पहचान की अभिव्यक्ति भी है। यह भाषाई विविधता भारत की ताकत है। हर भाषा अपने इतिहास, संस्कृति, मुहावरों, प्रेम-गीतों, धार्मिक ग्रंथों और जीवन-दर्शन को अपने में समेटे हुए है।

यह भाषाई बदलाव कोई संयोग नहीं, बल्कि हमारी सामाजिक और ऐतिहासिक यात्रा का परिणाम है। भाषा का बदलना सिर्फ शब्दों का बदलना नहीं, बल्कि उस समाज की मानसिकता, संस्कार, परंपराएँ, और जीवन-दृष्टि का बदलना है। हर बोली अपने क्षेत्र के लोगों की जीवनशैली, उनके इतिहास और उनकी भावनाओं को समेटे हुए है। बोली हमारे समाज का 'डीएनए' है, जो पीढ़ियों से चलती आ रही है।

कहावत का आधुनिक महत्व:

यह कहावत आज भी उतनी ही महत्वपूर्ण है, जितनी सदियों पहले थी। यह हमें सिखाती है कि हम अलग-अलग होकर भी एक हैं। यह हमें सहिष्णुता, विविधता और स्वीकार्यता का पाठ पढ़ाती है।

▸ **पर्यटन और सौहार्द:** जब हम यात्रा करते है, तो स्थानीय भाषा, संस्कृति, खान-पान को समझने से हमारा अनुभव गहरा हो जाता है। इससे समाज में सहिष्णुता, सम्मान और आत्मीयता बढ़ती है।

▸ **जल संरक्षण:** हर क्षेत्र की जल-गुणवत्ता अलग है, इसलिए जल संरक्षण की रणनीतियाँ भी स्थान-विशेष की आवश्यकताओं के अनुरूप होनी चाहिए। राजस्थान में 'जोहड़' (पारंपरिक जल संग्रहण), उत्तराखंड में 'स्प्रिंग-शेड' (झरनों का पुनर्जीवन), महाराष्ट्र में 'पाट' प्रणाली (कृषि जल प्रबंधन) जैसी पद्धतियाँ इसी विविधता के परिणाम हैं।

▸ **सामाजिक मीडिया/ व्यापारिक संदर्भ:** स्टार्टअप्स या ब्रांडिंग के लेखों में यह कहावत उपयोग होती है यह बताने के लिए कि भारत में हर कुछ किलोमीटर पर उपभोक्ता की सोच, भाषा और संस्कृति बदलती है। अतः एक ही मार्केटिंग संदेश सबके लिए समान नहीं हो सकता।

▸ **सांस्कृतिक अध्ययन/ शिक्षा:** यह कहावत भारतीय समाजशास्त्र, लोककला, पर्यटन और भाषाशास्त्र में सांस्कृतिक विविधता के प्रतीक के रूप में पढ़ाई जाती है।

▸ **सांस्कृतिक लचीलापन:** जब हम विविध भाषाओं, मान्यताओं और परंपराओं का सम्मान करते है, तो हमारा समाज अधिक लचीला और समावेशी बनता है। यह पूरे राष्ट्र को मुश्किल घड़ियों में एकजुट रखता है।

▸ **प्रतीकात्मक व्याख्या:** यह कहावतें केवल भाषा और पानी तक सीमित नहीं हैं वे जीवन के दर्शन को भी प्रकट करती हैं: जैसे पानी हर जगह अपने स्वाद और गुण के अनुसार बदलता है, वैसे ही मनुष्य भी अपने परिवेश और परिस्थितियों से प्रभावित होता है। जैसे वाणी कुछ दूरी पर बदल जाती है, वैसे ही संस्कृति, विचारधारा और अभिव्यक्ति भी क्षेत्र के अनुसार बदलती है, फिर भी समानता की एक डोर हमें जोड़ती है। इसलिए यह कहावत भारत की विविधता में एकता का प्रतीक है।

जिस देश में अलग-अलग भाषाएँ बोलने पर भी लोग एक-दूसरे को अपना मानते हैं और उनके बीच अपनापन कम नहीं होता, वही देश सही मायने में महान होता है। यह बात दिखाती है कि एक राष्ट्र की असली ताकत उसकी एकता में होती है, न कि उसकी एकरूपता में। अक्सर लोग सोचते है कि एक जैसी भाषा, संस्कृति या धर्म होने से ही देश एकजुट रहता है, लेकिन सच्चाई इसके विपरीत है। जब लोग भाषा की दीवार को पार करके भी एक-दूसरे का सम्मान करते है और उनसे जुड़ते हैं, तो वह समाज सही मायनों में मजबूत बनता है।

विविधता यानी अलग-अलग तरह के लोग, भाषाएँ और संस्कृति हमें एक-दूसरे से दूर नहीं करतीं, बल्कि हमें और भी पास लाती हैं। यह हमें एक-दूसरे के साथ जोड़ती है और हमें एक मजबूत और एकजुट समाज बनाती है। जब हम अलग-अलग पृष्ठभूमि के लोगों से मिलते हैं, तो हम नए विचारों और दृष्टिकोणों को सीखते है, जो हमारी सोच को और भी समृद्ध बनाते हैं। यह विविधता हमें सहिष्णुता, सम्मान और समझदारी सिखाती है, जो किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए बहुत जरूरी है। यह हमें सिखाती है कि हम सब अलग-अलग होते हुए भी एक ही परिवार का हिस्सा हैं।

यह कहावत असल में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को ही दर्शाती है, जिसका अर्थ है पूरा संसार एक परिवार है। जब हम अपनी भाषा, बोली, संस्कृति, पानी और प्रकृति की विविधता का सम्मान करते हैं, तभी हम विश्व-समाज का एक हिस्सा बन पाते हैं।

निष्कर्ष:

'चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी' सिर्फ एक पुरानी कहावत नहीं है। यह भारत की आत्मा का प्रतिबिंब है, जो हमें विविधता में एकता की शक्ति का एहसास कराती है। यह हमें यह सिखाती है कि

शेष पृष्ठ 14 पर

अनिल सलारिया

उत्तर भारत की भाषाएँ एवं साहित्य

उत्तर भारत, भारत के सांस्कृतिक, भाषायी और साहित्यिक वैभव का केंद्र रहा है। यहाँ की भाषाएँ न केवल संवाद का माध्यम हैं, बल्कि वे साहित्यिक अभिव्यक्ति, दर्शन, इतिहास और सामाजिक चेतना की वाहक भी रही है। उत्तर भारत, जिसे अक्सर भाषायी तौर पर हिंदी पट्टी के रूप में जाना जाता है। यह क्षेत्र न केवल गंगा-यमुना के उपजाऊ मैदानों के लिए प्रसिद्ध है, बल्कि अपनी अतुलनीय भाषायी विविधता और सहस्राब्दियों पुराने साहित्यिक इतिहास के लिए भी जाना जाता है। उत्तर भारत की भाषाएँ और साहित्य भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं, जिन्होंने दर्शन, धर्म, राजनीति और सामाजिक जीवन को गहराई से प्रभावित किया है।

1. उत्तर भारतीय भाषाओं का ऐतिहासिक परिदृश्य

उत्तर भारत की अधिकांश भाषाएँ भारोपीय (इंडो-आर्यन) भाषा परिवार के अंतर्गत आती हैं, जिनकी जड़ें प्राचीन वैदिक संस्कृत में निहित हैं। इनके विकास क्रम को मुख्य रूप से तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है:

क. प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (ईसा पूर्व 1500–ईसा पूर्व 500) : इस काल की प्रतिनिधि भाषा **संस्कृत** थी।

- **वैदिक संस्कृत:** यह वह भाषा है जिसमें चारों वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) और ब्राह्मण ग्रंथ रचे गए। यह भारतीय ज्ञान, दर्शन और धार्मिक परंपराओं का मूल आधार है।
- **लौकिक संस्कृत:** पाणिनी के व्याकरण - अष्टाध्यायी द्वारा मानकीकृत यह भाषा रामायण, महाभारत, उपनिषद और कालिदास जैसे कवियों की रचनाओं की भाषा बनी। संस्कृत ने उत्तर भारत की सांस्कृतिक और भाषाई चेतना को एक सुदृढ़ नींव प्रदान की।

ख. मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा (ईसा पूर्व 500-1000 ई.) : यह काल संस्कृत के सरल लोक-व्यवहार की भाषाओं में परिवर्तित होने का काल है।

- **पाली:** यह पहली देशभाषा मानी जाती है, जिसमें भगवान बुद्ध के उपदेश और त्रिपिटक रचे गए। इसने बौद्ध धर्म के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- **प्राकृत:** महावीर स्वामी के उपदेशों की भाषा, जिसमें जैन साहित्य की रचना हुई। शौरसेनी, मागधी, मराठी आदि इसके प्रमुख क्षेत्रीय रूप थे।
- **अपभ्रंश:** प्राकृत के अधिक परिवर्तित रूप को अपभ्रंश कहा गया। यह आधुनिक उत्तर भारतीय भाषाओं (जैसे हिंदी, गुजराती, मराठी, बंगाली) के उद्भव का संक्रमण काल था। इसी से विभिन्न आधुनिक भाषाओं ने जन्म लिया।

ग. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ (1000 ई.– अब तक)

अपभ्रंश के विभिन्न क्षेत्रीय रूपों से आधुनिक भाषाओं का जन्म हुआ। उत्तर भारत की प्रमुख आधुनिक भाषाएँ शौरसेनी, अपभ्रंश और अर्धमागधी अपभ्रंश से विकसित हुईं। इनमें हिंदी (जिसमें खड़ी बोली, ब्रज, अवधी आदि बोलियाँ शामिल हैं), पंजाबी, गुजराती, मराठी, और सिंधी प्रमुख हैं।

2. उत्तर भारत की प्रमुख भाषाएँ और उनका साहित्य

उत्तर भारत के भाषायी पटल पर अनेक भाषाएँ और बोलियाँ अपना विशिष्ट साहित्यिक योगदान देती हैं। इनमें हिंदी, पंजाबी और उर्दू का स्थान सर्वोपरि है।

क. हिंदी भाषा और हिंदी साहित्य

हिंदी, संवैधानिक रूप से भारत संघ की राजभाषा है और उत्तर भारत के विशाल भू-भाग की संपर्क भाषा (लिंगुआ फ्रैंका) है। इसका साहित्यिक इतिहास अत्यंत समृद्ध है और इसे पाँच प्रमुख कालों में विभाजित किया जा सकता है:

i. आदिकाल (वीरगाथा काल) (1050-1350 ई.)

इस काल में डिंगल और पिंगल भाषाओं में रासो साहित्य (वीर रस की रचनाएँ) लिखा गया। चंदबरदाई का 'पृथ्वीराज रासो' और नरपति नाल्ह का 'बीसलदेव रासो' प्रमुख हैं। अमीर खुसरो ने खड़ी बोली के प्रारंभिक रूप में पहेलियाँ और मुकरियाँ लिखकर महत्वपूर्ण योगदान दिया।

ii. भक्तिकाल (पूर्व मध्यकाल) (1350-1650 ई.)

इसे हिंदी साहित्य का स्वर्ण युग कहा जाता है। इस काल ने दो प्रमुख काव्य धाराएँ दीं:

निर्गुण धारा:

- ज्ञानाश्रयी शाखा: कबीर (जातिभेद पर तीखा प्रहार और निर्गुण ब्रह्म की उपासना)।
- प्रेमाश्रयी शाखा: मलिक मुहम्मद जायसी ('पद्मावत'- प्रेम की सूफी परंपरा)।

सगुण धारा:

- रामभक्ति शाखा: तुलसीदास ('रामचरितमानस'-अवधी भाषा में रचित, भारतीय संस्कृति का आधार ग्रंथ)।
- कृष्णभक्ति शाखा: सूरदास ('सूरसागर'- ब्रजभाषा में कृष्ण की बाल लीलाओं और प्रेम का अद्भुत वर्णन)।

iii. रीतिकाल (उत्तर मध्यकाल) (1650-1850 ई.)

इस काल में ब्रजभाषा साहित्य का केंद्र बनी। केशव, बिहारी और मतिराम जैसे कवियों ने श्रृंगार रस और अलंकारिकता को प्रधानता दी।

iv. आधुनिक काल (1850 ई.– अब तक)

- **भारतेन्दु युग:** भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने खड़ी बोली गद्य की नींव रखी और सामाजिक चेतना के विषयों पर साहित्य लिखा।
- **द्विवेदी युग:** महावीर प्रसाद द्विवेदी ने खड़ी बोली को साहित्य की सर्वमान्य भाषा बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
- **छायावाद:** जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा ने प्रकृति, प्रेम और रहस्यात्मकता को अपनी कविता का केंद्र बनाया।
- **उत्तर-छायावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद:** प्रेमचंद (उपन्यास-'गोदान'), अज्ञेय (कविता-'तार सप्तक') और मोहन राकेश (नाटक) ने आधुनिक जीवन के यथार्थ, सामाजिक समस्याओं और मनोवैज्ञानिक द्वंद्वों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया।

ख. पंजाबी भाषा और साहित्य

पंजाबी भाषा का विकास शौरसेनी अपभ्रंश की पश्चिमी शाखा टक्की/पैशाची से हुआ माना जाता है। यह भारत के पंजाब राज्य की प्रमुख भाषा है।

- **सिख धर्म का प्रभाव:** पंजाबी साहित्य पर सिख धर्म का गहरा प्रभाव है। गुरुमुखी लिपि में लिखा गया 'गुरु ग्रंथ साहिब' पंजाबी साहित्य का सर्वोच्च ग्रंथ है, जिसमें गुरु नानक देव से लेकर अन्य गुरुओं और संतों की वाणियाँ संकलित हैं।
- **सूफी काव्य:** बाबा फरीद, जिन्हें पंजाबी साहित्य का जनक माना जाता है और शाह हुसैन ने सूफी प्रेम और रहस्यवाद पर रचनाएँ कीं।
- **किस्सा काव्य:** वारिस शाह का 'हीर राँझा' पंजाब की अमर प्रेम कथा है।
- **आधुनिक साहित्य:** भाई वीर सिंह, मोहन सिंह, अमृता प्रीतम और शिव कुमार बटालवी ने आधुनिक पंजाबी कविता और गद्य को नई दिशा दी। अमृता प्रीतम ने पंजाबी साहित्य को विश्व पटल पर पहचान दिलाई।

ग. उर्दू भाषा और साहित्य

उर्दू का शाब्दिक अर्थ 'शिविर' होता है, जो दिल्ली के आसपास खड़ी बोली के साथ फारसी, अरबी और तुर्की शब्दों के मेल से विकसित हुई। यह मुख्य रूप से फारसी लिपि में लिखी जाती है।

- **शायरी का केंद्र:** उर्दू साहित्य का प्राण उसकी शायरी (कविता) है।
- **गजल:** यह, प्रेम, दर्द, दर्शन और रहस्यवाद की अभिव्यक्ति का माध्यम है। मीर तकी मीर और मिर्जा गालिब को गजल का शिखर माना जाता है।
- **नज्म:** लंबी कविताएँ, जिनमें सामाजिक और राजनीतिक विषय भी शामिल होते हैं।
- **आधुनिक योगदान:** अल्लामा इकबाल (दर्शन), फैज

अहमद फैज (क्रांतिकारी नज्म) और सआदत हसन मंटो (अफसाना/लघुकथा) ने आधुनिक उर्दू साहित्य को समृद्ध किया।

घ. अन्य महत्वपूर्ण बोलियाँ और उनका साहित्यिक योगदान

उत्तर भारत में हिंदी की कई बोलियाँ भी हैं, जिनका अपना समृद्ध लोक और लिखित साहित्य है:

बोली (क्षेत्र)	साहित्यिक योगदान	प्रमुख कवि/रचनाकार
ब्रजभाषा (मथुरा, आगरा)	भक्तिकाल में कृष्ण काव्य की मुख्य भाषा, रीतिकाल का केंद्र	**सूरदास, मीराबाई, रसखान, बिहारी**
अवधी (अयोध्या, लखनऊ)	राम भक्ति काव्य और सूफी प्रेम काव्य का केंद्र	**तुलसीदास** ('रामचरितमानस'), **जायसी** ('पद्मावत')
भोजपुरी (बिहार, पूर्वी उत्तरप्रदेश)	लोक साहित्य, लोक गीत (बिदेसिया), नाट्य	**भिखारी ठाकुर** (लोक नाट्य)
मैथिली (बिहार, नेपाल तराई)	बौद्ध तांत्रिक दोहों से शुरुआत, लोकगीत, ऋतु गीत महाकाव्य, गद्य आदि	**विद्यापति** (कीर्तिलता), **नागार्जुन** (आधुनिक)
राजस्थानी (राजस्थान)	वीरगाथात्मक काव्य (रासो साहित्य) और लोकगीत	**मीराबाई** (भक्ति पद), **कन्हैयालाल सेठिया**

3. भाषाओं और साहित्य की अंतर्संबंधित प्रकृति

उत्तर भारत की भाषाओं और उनके साहित्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता उनका आपसी आदान-प्रदान है। यह गंगा-जमुनी तहज़ीब की एक भाषाई अभिव्यक्ति है।

- **खड़ी बोली का विकास:** खड़ी बोली (आधुनिक हिंदी और उर्दू का आधार) का विकास स्वयं विभिन्न बोलियों और संस्कृत, फारसी, अरबी के मेल से हुआ।
- **भक्ति आंदोलन की एकता:** भक्ति आंदोलन ने विभिन्न भाषाओं (ब्रज, अवधी, पंजाबी, राजस्थानी) के माध्यम से एक ही दार्शनिक और आध्यात्मिक संदेश को प्रसारित किया, जिससे भाषाई दूरियाँ मिटीं। कबीर की 'सधुक्कड़ी' (पंचमेल खिचड़ी) भाषा इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।
- **उर्दू और हिंदी का सहअस्तित्व:** उन्नीसवीं सदी तक हिंदी और उर्दू हिंदुस्तानी के रूप में एक-दूसरे के निकट थीं। इनके बोलचाल के स्वरूप में आज भी काफी समानता है। प्रेमचंद जैसे लेखक दोनों भाषाओं में लिखते थे।

4. आधुनिक परिदृश्य और समकालीन चुनौतियाँ

21वीं सदी में उत्तर भारत की भाषाओं और साहित्य में नए आयाम जुड़े हैं, लेकिन वे कई चुनौतियों का भी सामना कर रहे हैं।

क. सिनेमा और मीडिया का प्रभाव

- **हिंदी (हिन्दुस्तानी) का वर्चस्व:** बॉलीवुड (हिंदी सिनेमा) ने हिंदी को देशव्यापी और विश्वव्यापी पहचान दी है। मीडिया और ओटीटी प्लेटफार्म ने हिंदी को सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा बना दिया है।
- **आंचलिक साहित्य का पुनरुत्थान:** वेब सीरीज और क्षेत्रीय सिनेमा के उदय से भोजपुरी, हरियाणवी और राजस्थानी जैसी बोलियों पर आधारित साहित्य और कला को नया मंच मिला है।

ख. तकनीकी और डिजिटल युग

- **डिजिटल भाषाएँ:** इंटरनेट, सोशल मीडिया और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के आगमन से भारतीय भाषाओं में डिजिटल सामग्री का निर्माण तेजी से बढ़ा है। यूनिकोड, गूगल इनपुट टूल और एआई अनुवाद ने हिंदी और अन्य भाषाओं को तकनीकी रूप से सशक्त बनाया है।
- **ई-साहित्य और ब्लॉगिंग:** युवा लेखक पारंपरिक प्रकाशन माध्यमों के साथ-साथ ब्लॉगिंग, पॉडकास्टिंग और ई-पुस्तकों के माध्यम से अपनी रचनाएँ प्रकाशित कर रहे हैं।

ग. समकालीन साहित्य के विषय

आधुनिक उत्तर भारतीय साहित्य ने शहरी जीवन की जटिलताएँ, वैश्वीकरण का प्रभाव, स्त्री विमर्श, दलित साहित्य और राजनीतिक विसंगतियों को अपनी विषय-वस्तु बनाया है। सामाजिक यथार्थवाद और मनोवैज्ञानिक द्वंद समकालीन साहित्य की प्रमुख विशेषताएँ हैं।

घ. चुनौतियाँ : बोलियों का क्षरण

मानक हिंदी और अंग्रेजी के बढ़ते प्रभुत्व के कारण कई क्षेत्रीय बोलियाँ (जैसे गढ़वाली, कुमाऊँनी, मगही, ब्रज आदि) लुप्त होने के कगार पर हैं। यह भाषाई क्षरण सांस्कृतिक पहचान के क्षरण का कारण बन रहा है।

उपसंहार :-

उत्तर भारत की भाषाएँ और साहित्य केवल संवाद के साधन नहीं हैं, बल्कि यह भारतीय सभ्यता का जीता-जागता विश्वकोश है। संस्कृत की वैज्ञानिकता से लेकर कबीर की सामाजिक क्रांति, तुलसी की भक्ति-भावना और गालिब की रुमानियत तक-इस क्षेत्र के साहित्य ने मानवीय भावनाओं और दार्शनिक ऊँचाइयों के हर आयाम को छुआ है। उत्तर भारत का साहित्यिक परिदृश्य आज भी जीवंत है और निरंतर विकसित हो रहा है।

वर्तमान समय में, इन भाषाओं को संरक्षित और संवर्धित करना अत्यंत आवश्यक है। शिक्षा में मातृभाषा के प्रयोग को प्रोत्साहन देना, बोलियों के लोक साहित्य का दस्तावेजीकरण करना और आधुनिक तकनीकी मंचों पर इनकी उपस्थिति सुनिश्चित करना- ये वे कदम हैं जो उत्तर भारत की इस अमूल्य भाषायी और साहित्यिक विरासत को भविष्य की पीढ़ियों तक पहुँचा सकते हैं। यह साहित्य ही हमें हमारी जड़ों से जोड़ता है और 'विविधता में एकता' के भारतीय दर्शन को मूर्त रूप देता है।

पृष्ठ 10 का शेषांश

हमें अपनी भाषाओं, बोलियों और प्राकृतिक जल स्रोतों को समझना, उनका सम्मान करना और उन्हें संरक्षित करना चाहिए।

तो अगली बार जब आप यात्रा करें, तो सिर्फ नजारों का आनंद न लें, बल्कि वहाँ की बोली को सुनें और वहाँ के पानी का स्वाद भी महसूस करें। किसी से हाथ मिलाएँ, तो सिर्फ 'हैलो' या 'नमस्ते' न कहें- उनकी बोली में थोड़ा सा बोलने का प्रयास करें। जो पानी आपको पीने को मिले, उसके स्वाद पर ध्यान दें। यही अनुभव आपको भारत की सच्ची आत्मा से जोड़ेगा और आपको समझाएगा कि हम सभी अलग होकर भी एक हैं।

'हिंदी का प्रश्न स्वराज का प्रश्न है'

महात्मा गांधी

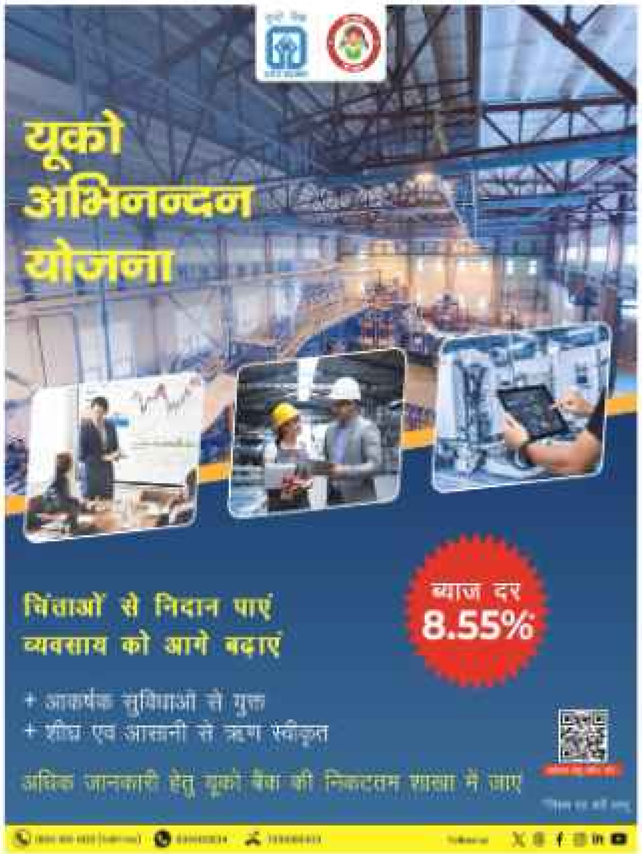

चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर वाणी

मनीष कुमार प्रियतम

यह एक हिंदी कहावत है, जिसका अर्थ है कि भारत जैसे विशाल देश में हर थोड़ी दूरी पर पानी का स्वाद और भाषा/बोली बदलती जाती है। यह भारत की सांस्कृतिक, सामाजिक और भौगोलिक विविधता को दर्शाता है। यहाँ हर क्षेत्र (स्थान) का अपना अलग खान-पान और भाषा होती है, जो उस क्षेत्र की विशिष्टता को उजागर करती है।

कहावत का अर्थ:

कोस: यह एक प्राचीन भारतीय दूरी मापने की इकाई है, जो आजकल लगभग 3 किलोमीटर के बराबर मानी जाती है।

कोस कोस पर बदले पानी: इसका मतलब है कि दूरी परिवर्तन पर पानी का स्वाद अलग-अलग मिलता है। वैसे तो रासायनिक आधार पर पानी स्वादहीन है परंतु इसमें उपस्थित घुलनशील खनिजों और पदार्थों के कारण मानव इंद्रियों को इसके एक विशेष स्वाद का अनुभव होता है।

चार कोस पर वाणी: इसका अर्थ है कि लगभग 12 किलोमीटर की दूरी पर लोगों की भाषा या बोली में परिवर्तन आता है। यह बदलाव मुख्य रूप से सामाजिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक कारणों से होता है। इस कहावत के माध्यम से यह सिद्धांत उजागर होता है कि भारत एक विशाल और विविधताओं से भरपूर देश है, जहाँ विभिन्न भाषाएँ, बोलियाँ और सांस्कृतिक परंपराएँ पाई जाती हैं।

भारत में विभिन्न भाषाई और सांस्कृतिक समुदायों का होना इस कहावत को चरितार्थ करता है। एक ही राज्य में, गाँव से गाँव या जिले से जिले में जाने पर भाषा, बोली और उच्चारण में अंतर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यह विविधता हमारी सांस्कृतिक धरोहर को समृद्ध बनाती है और इसे अनोखा एवं रंगीन भी बनाती है।

इस कहावत से हमें यह प्रेरणा मिलती है कि हमें अपने देश की विविधता का सम्मान करना चाहिए और इसे गर्व के साथ स्वीकार एवं आत्मसात करना चाहिए। यह विविधता ही हमें एकजुट करती है और हमें एक मजबूत एवं सजीव समाज और राष्ट्र का हिस्सा बनाती है। इस कहावत के माध्यम से हम यह समझ सकते हैं कि हर जगह का अपना एक विशिष्ट महत्व और पहचान है, जो हमारी सांस्कृतिक समृद्धि को दर्शाती है।

स्थान परिवर्तन के कारण भाषा, बोली या वाणी में होने वाले परिवर्तन के बावजूद इसकी गति अविरल रहती है। यह अपनी प्रवाहपूर्ण और निरंतर गति के साथ-साथ समय और काल के अनुकूल परिवर्तित होते हुए भी अपनी मौलिकता और पहचान बनाए रखती है।

इसकी यात्रा एक नदी की तरह अविरल है। जैसे नदी अपनी यात्रा के दौरान अपनी पहचान नहीं खोती, बल्कि अपने प्रवाह के स्थान से समृद्ध होती हुई आगे बढ़ती है, ठीक उसी प्रकार भाषा की स्थिति भी है। विकास और निरंतरता के क्रम में यह स्थानीय शब्दों, लोकोक्तियों, समानार्थी शब्दों और नवीनतम शब्दों से समृद्ध होती हुई अपनी यात्रा जारी रखती है। इस प्रकार समय और स्थान के साथ-साथ भाषा में बदलाव आते हैं, लेकिन वह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक निरंतर चलती रहती है।

भाषा की अविरलता के मुख्य आधार:

निरंतरता और प्रवाह: भाषा कभी रुकती नहीं, बल्कि लगातार विकसित होती रहती है। यह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक संवाद के माध्यम से चलती रहती है, ठीक वैसे ही जैसे हिंदी की यात्रा संस्कृत के आधार से आरंभ हुई और समय के साथ बदलते हुए नित नए रूप ग्रहण करती रही।

परिवर्तनशील प्रकृति: भाषा स्थिर नहीं होती, बल्कि उसमें हमेशा बदलाव आते रहते हैं। इन बदलावों को भाषा परिवर्तन कहते हैं। विभिन्न भाषा-भाषी समुदायों के आपसी संपर्क से एक भाषा के अनेकों शब्द दूसरी भाषा में समाहित होते चले जाते हैं और इस प्रक्रिया से दोनों भाषाओं के शब्द भंडार में वृद्धि होती है।

शेष पृष्ठ 28 पर

हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं का सहसंबंध

ऋतु प्रकाश
सहायक महाप्रबंधक
प्रधान कार्यालय

भाषा विचारों का परिधान है। हिंदी विश्व की प्रमुख भाषा एवं भारत की राजभाषा है। हिंदी और इसकी बोलियां, संपूर्ण भारतवर्ष में विविध राज्यों में बोली जाती है एवं विदेशों में भी लोग हिंदी भाषा का प्रयोग करते हैं। बड़ी प्यारी सी सरल भाषा है हिंदी, जो भारतीय संस्कृति की आत्मा है। किसी भी भाषा को समृद्ध, विकसित एवं सुलभ बनाने के लिए उसमें सर्वव्यापकता, प्रचुर साहित्य भाव, बनावट की दृष्टि से सरलता और वैज्ञानिकता सब प्रकार के भावों को प्रकट करने के सामर्थ्य आदि गुण होने अनिवार्य होते हैं। यह सभी गुण हिंदी भाषा में स्वयं ही परिलक्षित होते हैं।

उद्भव और विकास के संबंध में प्रचलित धारणा पर विचाराधीन होने पर हम पाते हैं कि सामान्यता प्राकृत की अपभ्रंश अवस्था से ही हिंदी का आविर्भाव स्वीकार किया गया है। प्राकृत भाषा हिंदी में कई वर्षों तक चलती रही। पुरानी अपभ्रंश भाषा और बोलचाल की देशी भाषा का प्रयोग निरंतर बढ़ता गया। आज जिस भाषा को हिंदी के रूप में जाना जाता है, वह आधुनिक आर्य भाषाओं में से एक है। आर्य भाषा का प्राचीनतम रूप वैदिक संस्कृत है जो साहित्य की भाषा है। हिंदी भाषा में मुक्त चाल की भाषा, मानक भाषा, संपर्क भाषा इत्यादि सारे गुण मौजूद है। कोई भी भाषा विकसित एवं समृद्ध तभी हो सकती है जब वह अपने में अन्य भाषाओं का सम्मिश्रण कर उसे अपना बना सके क्योंकि भाषा में जितना अधिक प्रभाव होगा वह उतनी ही ज्यादा समृद्ध एवं शक्तिशाली होगी। हिंदी भाषा में अन्य भाषाओं का संबंध इस प्रकार निहित है जैसे फूलों में व्याप्त खुशबू, झरने के पानी में मिठास एवं एक विकसित सभ्यता में अद्भुत संस्कृति का समावेश। जिस प्रकार भारतवर्ष ने सदैव दूसरी संस्कृतियों को स्वयं में आत्मसात किया है ठीक उसी प्रकार हिंदी ने अन्य भाषाओं के साथ सहसंबंध बनाया है। भारतीय संस्कृति का इतिहास गवाह है कि प्राचीन काल से ही हर संस्कृति को इसने एकसार कर अपना बनाया है, क्योंकि कभी मुगल, कभी अंग्रेज, कभी पुर्तगाली... युग बदलते गए, युग के साथ विभिन्न प्रकार की संस्कृतियों का आगमन हुआ, सभ्यता का विकास और भाषाई संस्कृति का उद्भव एवं समावेश हुआ और इसी समावेश का परिणाम रहा हिंदी में अन्य भाषाओं का सम्मिश्रण।

भारत में जब मुगलों का शासन आया तो साथ में आया फारसी और तुर्की भाषाओं का वृहत शब्दकोश एवं साथ ही साथ उर्दू तहजीब की एक नई विरासत जिसने हिंदी भाषा को बोलचाल की भाषा में अधिक रूप से उन्नत एवं समृद्ध किया। हिंदी प्रारंभ से ही अन्य भाषाओं के सम्मिश्रण को स्वयं में समाती रही परंतु कभी भी इसने अपनी मिठास नहीं खोयी। हिंदी भाषा के कतिपय विद्वानों, प्रतिष्ठित आलोचकों के मन में भी संबंधित भाषाई दुविधा के बावजूद यह अन्य भाषाओं से मुक्त नहीं रही। हिंदी कभी अपनी भाषा क्षेत्र की सीमाओं में नहीं सिमटी। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी और द्वारका से लेकर कटक तक भारतीय लोक चेतना की समवाहिका रही। भारतीय संस्कृति को विकसित एवं समृद्ध बनाने में मिश्रित भाषा के विविध भेदों एवं रूपों के माध्यम से एकीकृत संस्कृति निर्माण होता है। भाषिक भेदों के मध्य संभाषण की संभाव्यता से भाषिक एकता का निर्माण होता है।

हिंदी शब्दकोश पर विदेशी भाषा का भी अधिक प्रभाव पड़ा। वक्त के साथ भारत की साम्राज्य व्यवस्था बदलती रही और कालांतर में आर्थिक, राजनीतिक, सांप्रदायिक विरासत के साथ भाषा की विरासत पल्लवित पुष्पित होती रही। यह स्वाभाविकता है कि विजय जाति के अनेक शब्द विजित जाति की भाषा में मिल जाते हैं, क्योंकि परिस्थितिजन्य ऐसा होता है। इससे भाषा पुष्ट और व्यापक होती है और उसमें अनेक उपयोगी विचार संचित होते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि भाषा विजातीय शब्दों वाक्यों और भावों को इस प्रकार ग्रहण करें कि उसकी छवि और भी परिष्कृत हो। भाषा विकास की साधक है परंतु यह आवश्यक है कि यह सम्मिश्रण सीमित एवं मर्यादित हो।

भाषा निरंतर बदलती रहती है और दूसरी भाषाओं के साथ मिलकर अलग रूप लेती है। जब से प्रिंट मीडिया एवं इंटरनेट का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ है तब से हिंदी का अन्य भाषाओं के साथ मिलाप बढ़ गया है। ऐसा नहीं है कि इनकी जगह अपनी भाषा के सीधे-सादे बोलचाल के

शब्द लिखे ही नहीं जा सकते। जो अर्थ इन मिश्रित शब्दों के साथ निकलता है उसी अर्थ को देने वाले शब्द अपनी हिंदी भाषा में आसानी से मिल सकते हैं परंतु कुछ शब्द प्रचलन ही ऐसा हो गया है कि हिंदीभाषी लोगों को पसंद नहीं आते। वह यथासंभव मिश्रित भाषा के शब्द लिखना ही जरूरी समझते हैं। परिणामत: वर्तमान में हिंदी दो तरह की हो गई है एक तो वह जो सर्वसाधारण में बोली जाती है, दूसरी वह जो पुस्तकों और अखबारों में लिखी जाती है। वस्तुत: पुस्तकें या अखबार लिखने का मुख्य उद्देश्य होता है कि जो भी बातें उस में लिखी जाए वह पढ़ने वालों को आसान एवं सहज भी लगे। यह आवश्यक है कि हमें अपनी मातृभाषा का सम्मान अवश्य करना चाहिए और उसे अधिक से अधिक प्रयोग में लाने का प्रयास करना चाहिए।

भाषा के क्षेत्र में हिंदी का प्रयोग अपनी सहूलियत के हिसाब से होता है। उसने भी अन्य बोलियों के साथ-साथ विदेशी भाषा के शब्दों को अपना लिया है। इसके साथ ही यह भी सही है कि विचारों की भाषा वह नहीं हो सकती जो बाजार में बोली जाती है। हिंदी में भी अनेक शब्द ऐसे हैं जिनके विदेशी स्रोतों का हमें पता ही नहीं है अर्थात् भाषा में जितना अधिक प्रवाह होगा यह लोगों की जुबान पर भी उतनी जल्दी चलेगी। रोजमर्रा के जितने करीब होगी लोगों मे आकर्षण उतना ही ज्यादा होगा और वह ज्यादा से ज्यादा एवं अतिशीघ्र अपनाई जाएगी। इस प्रकार के प्रयोगों से हिंदी में कुछ फारसी शब्द अधिक मिल गए हैं और उर्दू नामकरण में विभेद मात्रा अधिक बढ़ा दी है। बोलचाल की हिंदी में भी संस्कृत के शब्द हैं परंतु उसमें तद्भव शब्दों की अधिकता है, जो संस्कृत के शब्द अपने शुद्ध रूप में व्यवस्थित होते हैं उनको तत्सम कहते हैं यथा- हर्ष, शोक, कार्य, कर्म, व्यवहार इत्यादि। जो संस्कृत शब्द प्राकृत में होते हुए हिंदी तक परिवर्तित रूप में पहुंचते हैं उनको तद्भव कहते हैं, जैसे काम, कान, हाथ इत्यादि।

कालांतर में हिंदी भाषा पर 800 वर्षों तक मुगलों का शासन रहा एवं हिंदी भाषा वहाँ की भाषा थी, जहाँ पर मुसलमान के साम्राज्य का केंद्र था। इसलिए हिंदी भाषा पर अरबी भाषा का बहुत अधिक प्रभाव देखा जाता है। अरबी मुसलमानों की धार्मिक भाषा थी। मुसलमान भारत में अरब से ही नहीं ईरान और तुर्किस्तान से भी आए इसलिए हिंदी भाषा पर अरबी, फारसी और तुर्की तीनों का व्यापक रूप से प्रभाव पड़ा है। इस कारण अनेक संस्कृत और हिंदी शब्दों के स्थान पर भी अरबी फारसी और तुर्की शब्दों का प्रचार हुआ और हिंदी में विदेशी शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ। इन भाषाओं के आधार पर बहुत से शब्द ऐसे भी बने जिनका आधा हिस्सा हिंदी और दूसरा आधा अरबी फारसी इत्यादि का कोई शब्द जैसे-पानदान,पीकदान, समझदार इत्यादि। फारसी से भी प्रचुर शब्दों का प्रचार जनसाधारण और हिंदी में हुआ और कानून एवं अदालत संबंधी सैकड़ों पारिभाषिक शब्द व्यवहार में आने लगे। आज भी मुख्य न्यायिक कार्यालयों में अरबी एवं फारसी शब्दों का इस्तेमाल अत्यधिक होता है। डॉ. गिलक्रिस्ट के शब्दों में जो भाषा आज हिंदुस्तानी कहलाती है उसी में हिंदी,उर्दू,अरबी, फारसी एवं संस्कृत भाषा के सम्मिलित शब्द हैं। कालांतर में खड़ी बोली ही अधिक विकसित होकर अपने मानक रूप में वर्तमान और बहु- प्रचलित मानक हिंदी भाषा के रूप में सामने आई।

भाषा नदी की धारा के समान चंचल होती है, यह रुकना नहीं जानती। यदि कोई भाषा को बलपूर्वक रोकना भी चाहे तो यह उसके बंधन को तोड़कर आगे निकल जाती है और यही भाषा के संभावित प्रकृति एवं प्रवृत्ति है। हिंदी भाषा के विकास क्रम में समय अनुकूल बदलते रहने की कला स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। हिंदी और अन्य भाषाओं में सहसंबंध का अभिप्राय एक व्यक्ति द्वारा एक ऐसी भाषा में बोलकर किसी दूसरे व्यक्ति की आत्मिक सेवा करना, जो उसी भाषा में बोलता है। वैसे तो हिंदी के शब्दों की उत्पत्ति भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत से हुई है, परंतु कुछ शब्द ऐसे हैं जो दूसरी भाषाओं से बिना किसी बदलाव के हमारी बोली में आ गए हैं। संस्कृत, अरबी, फारसी और तुर्की आदि मुख्य भाषाएँ हैं जिन्होंने हिंदी पर सबसे अधिक अपना प्रभाव डाला है। कंप्यूटर, स्टेशन, हॉस्पिटल, सिनेमा, मशीन इत्यादि ऐसे शब्द हैं जिनका प्रयोग हम धड़ल्ले से करते हैं और यह सोचते हैं कि हम हिंदी भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। अरबी साहित्य एवं भाषा का भारतीय संस्कृति पर गहरा असर है।

अरबी साहित्य और कविताओं के प्रचार-प्रसार के साथ हिंदी पर इसके शब्दों का प्रयोग भी बढ़ता गया। कुछ अरबी हिंदी शब्द जो आमतौर पर भारत में भारतीय भाषा में प्रयोग होते हैं जैसे- इमारत, कानून और बहादुर, इंसान, दुनिया, शीशा आदि यह सब तुर्की भाषा के शब्द हैं। हिंदी एक समृद्ध भाषा है और अपने नाम की तरह ही इस पर विभिन्न भाषाओं और संस्कृतियों की छाप है। यह एक उदार भाषा है, जो विविध भाषाओं के शब्दों को अपने खजाने में ऐसे समेट लेती है जैसे वह सब उसके ही बहुमूल्य विरासत हो।

शेष पृष्ठ 23 पर

कुमार संतोष
वरिष्ठ प्रबंधक
अंचल कार्यालय, दुर्गापुर

सरकारी प्रयास - भारतीय भाषाओं के प्रचार-प्रसार में तकनीकी टूल्स का योगदान

समाज की बुनियाद भाषा है। भाषा के बिना हम किसी समाज की कल्पना भी नहीं कर सकते। किसी स्थान की जलवायु, नदी और पर्वत, उसकी सर्दी और गर्मी तथा अन्य मौसमी हालात, सब मिलजुल कर वहाँ के प्राणियों में एक विशेष गुण का विकास करती हैं, जो प्राणियों की शक्ल-सूरत, व्यवहार-विचार और स्वभाव पर अपनी छाप लगा देती है और अपने को व्यक्त करने के लिए एक विशेष भाषा-बोली का निर्माण करती है। इस प्रकार हमारी भाषा का सीधा संबंध हमारी आत्मा से है या हम कह सकते हैं कि भाषा हमारी आत्मा का बाहरी रूप है। इसके एक-एक अक्षर में हमारी आत्मा का विकास होता है जिससे हमारी भाषा भी प्रौढ़ और पुष्ट होती जाती है। राजनीतिक, व्यापारिक या धार्मिक संबंध जल्द या देर से कमजोर पड़ सकते हैं और प्रायः टूट जाते हैं लेकिन भाषा का रिश्ता समय और अन्य बिखरने वाली शक्तियों की परवाह नहीं करता और एक तरह से अमर हो जाता है।

भाषा तकनीक आज परिपक्वता के स्तर पर पहुंच गई है और यह अंग्रेजी और दुनिया की कई अन्य भाषाओं का इस्तेमाल करने वालों पर बड़े पैमाने पर असर डाल रही है। भारतीय भाषा तकनीक लोगों को सकती है, इंटरनेट को बेहतर सर्च मुहैया कराया जा सकता है, डिजिटल तौर पर स्कैनिंग वाली किताबें और अन्य सामग्रियों को ऑप्टिकल कैरेक्टर रीडर्स का उपयोग कर ज्यादा सुगम्य बनाया जा सकता है। भारत की समृद्ध भाषाई विविधता के संरक्षण की दिशा में 30 अगस्त 2025 को भारत सरकार का जनजातीय कार्य मंत्रालय ने जनजातीय भाषाओं के लिए भारत का पहला एआई- संचालित अनुवाद 'आदिवाणी' का बीटा संस्करण लॉन्च किया है।

तकनीक के क्षेत्र :-

यहाँ भारतीय भाषा तकनीक से जुड़े क्षेत्र और ऐसे हर क्षेत्र से संबंधित कार्य करती है।

स्थानीयकरण :-

हमारे संदर्भ में स्थानीयकरण अर्थात् इलेक्ट्रॉनिक उपकरण मानकों का इस्तेमाल करते हुए भारतीय भाषाओं से जुड़ा है। उदाहरण के तौर पर जब कोई फोन खरीदता है, तो उसके पास फोन के डिस्प्ले, की-बोर्ड आदि के लिए पहले ही हिंदी और अंग्रेजी के साथ-साथ इसमें संबंधित क्षेत्र की भाषा का विकल्प होना चाहिए। इसके अलावा ग्राहक के लिए बाद में बिना हैंडसेट बदले मांग और जरूरत के हिसाब से किसी अन्य भारतीय भाषा को शामिल करने का विकल्प होना चाहिए। इससे यह सुनिश्चित होता है कि एक उपकरण पर तैयार डेटा दूसरे उपकरण पर इस्तेमाल (डिस्प्ले, एडिट व प्रोसेस) करने लायक है। उदाहरण के तौर पर अगर मैं एक उपकरण पर तैयार मैसेज दूसरा उपकरण इस्तेमाल

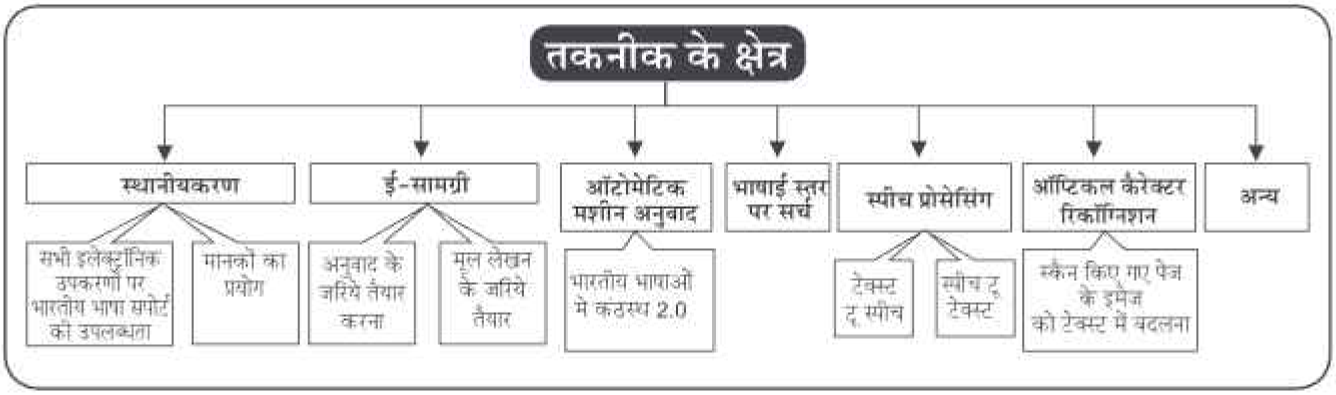

अपनी भाषाओं में सामग्री की उपलब्धता के लिए गुंजाइश बना सकती है। उदाहरण के तौर पर अंग्रेजी और अन्य भारतीय भाषाओं में मौजूद सामग्री का ऑटोमेटिक तरीके से अनुवाद किया जा सकता है।

इसी तरह, कंप्यूटर निरक्षर या दृष्टिबाधित लोगों के लिए टेक्स्ट-टू-स्पीच सिस्टम के जरिये सूचनाएँ पढ़ सकता है। साथ ही, टेलीफोन स्पीच इंटरफेस के जरिये रिमोट डाटा की उपलब्धता मुमकिन हो

करने वालों को भेजता हूँ, तो यह डिस्प्ले के योग्य होना चाहिए। ऐसा तभी होगा, जब मानकों का इस्तेमाल किया जाए। इनमें तमाम उपकरणों की नुमाइंदगी और कीबोर्ड के लिए यूनिकोड का इस्तेमाल प्रमुख है, ताकि उपयोगकर्त्ता को हर बार अलग इलेक्ट्रॉनिक उपकरण का इस्तेमाल करते वक्त नई प्रणाली- कीबोर्ड लेआउट का इस्तेमाल नहीं करना पड़े।

ई-सामग्री तैयार करना :-

भारतीय भाषाओं में ई-सामग्री तैयार करने की सख्त जरूरत है। बेबाक ई-सामग्री किताबों का विकल्प नहीं है, लेकिन युवा पीढ़ी का इंटरनेट पर उपलब्ध सामग्रियों पर निर्भरता बढ़ गई है।

वर्ष 2000 में जर्मनी में यह पाया गया कि इस देश के युवा इंटरनेट पर जर्मनी भाषा की सामग्री के मुकाबले अंग्रेजी भाषा की सामग्री देख रहे हैं। यह पाया गया कि ऐसी स्थिति इसलिए बनी, क्योंकि इंटरनेट पर जर्मन भाषा में पर्याप्त मात्रा में सामग्री उपलब्ध नहीं है। राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास कर इंटरनेट पर बड़ी मात्रा में जर्मन सामग्रियां (कंटेंट) पेश की गई।

भारत में बड़ी संख्या में लोग अंग्रेजी नहीं बल्कि भारतीय भाषाएँ ही जानते हैं। लिहाजा, सभी भारतीय भाषाओं में बड़े पैमाने पर ई-सामग्री तैयार करना ज्यादा अहम है। भारतीय भाषाओं में ई-सामग्री तेजी से तैयार हो सकती है। अल्पकालिक अवधि में अंग्रेजी वाली सामग्री का अनुवाद कर ऐसा किया जा सकता है। हालांकि, दीर्घकालिक अवधि में भारतीय भाषाओं में मूल सामग्री तैयार की जानी चाहिए।

भारतीय भाषाओं में अनुवाद का इस्तेमाल सभी भारतीय भाषाओं में सामग्री तैयार करने में किया जा सकता है। भारतीय भाषाओं में अनुवाद मूल सामग्री को पहुंचाने में असरदार हो सकता है और यह भारतीय संदर्भ में भी उपयुक्त होगा।

ऑटोमेटिक मशीन अनुवाद :-

ऑटोमेटिक मशीन अनुवाद किसी सामग्री का दूसरी भाषा में तुरंत अनुवाद कर देता है। ऐसी स्थिति में अनुवाद की गुणवत्ता संबंधित दो भाषाओं के बीच की दूरी और इस्तेमाल की गई तकनीक पर निर्भर करती है। यह उपयोगकर्ता को दूसरी भाषा में तुरंत पाठ्य सामग्री उपलब्ध कराता है। इसके तहत अंग्रेजी से भारतीय भाषाओं में अनुवाद की गुणवत्ता ज्यादा स्तरीय नहीं होती है, क्योंकि अंग्रेजी भाषा विज्ञान के तौर पर भारतीय भाषाओं से दूर है। दूसरी तरफ, भारतीय भाषाओं के बीच मशीन अनुवाद की गुणवत्ता काफी बेहतर होती है।

भारतीय भाषाओं के लिए ऑटोमेटिक मशीन अनुवाद प्रणाली उपलब्ध है और यह अच्छी गुणवत्ता का अनुवाद तैयार करती है।

कंठस्थ 2.0-

यह भारत सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा विकसित एक स्मृति - आधारित टूल है, जिसे हिंदी और अंग्रेजी के बीच दस्तावेजों का अनुवाद करने के लिए इस्तेमाल किया जाता है।

इसका उद्देश्य सरकारी अनुवाद कार्य में लगने वाले समय और मानव संसाधन को बचाना है।

भारतीय भाषाई स्तर पर सर्च :-

जैसे-जैसे भारतीय भाषाओं में ई-सामग्री बढ़ेगी, इंटरनेट पर यूजर्स द्वारा प्रासंगिक सामग्री की खोज की जरूरत का दायरा व्यापक तौर पर बढ़ेगा। यहाँ तमाम भारतीय भाषाओं में सर्च करना अहम होगा। भारतीय भाषाओं में सामग्री तैयार करने के मामले में यह विशेष तौर पर अहम होगा, क्योंकि हो सकता है कि शुरू में सभी भारतीय भाषाओं में बड़ी मात्रा में सामग्री उपलब्ध नहीं हो।

इस कार्य के लिए तकरीबन आधा दर्जन भाषाओं में तकनीक उपलब्ध है। हालांकि, भाषाओं में सामग्री की सूची बनाने की जरूरत है, साथ ही और अधिक भाषाओं को भी जोड़ने की जरूरत है।

स्पीच प्रोसेसिंग :-

इस तकनीक के दो हिस्से है-

टेक्स्ट-टू-स्पीच	स्पीच-टू-टेक्स्ट
इस तकनीक में कंप्यूटर भारतीय भाषाओं में कोई सामग्री पढ़ने के लायक बनाती है।	यह तकनीक कंप्यूटर को बोली गई भाषा को सुनने में मदद करती है और इसे टेक्स्ट फाइल यानी पढ़ने लायक सामग्री में बदलती है।

टेक्स्ट-टू-स्पीच का उपयोग दृष्टिहीन या निरक्षर व्यक्ति द्वारा टेक्स्ट फाइल को उपलब्ध कराने में किया जाता है। यह टेलीफोन पर संवाद के लिए भी गुंजाइश बनाता है, जहाँ टेक्स्ट को उपयोगकर्त्ता द्वारा नहीं देखा जा सकता है। टीटीएस एक परिपक्व तकनीक है और यह दर्जनभर से अधिक भारतीय भाषाओं मे उपलब्ध है।

ऑटोमेटिक स्पीच रिकॉग्निशन वहाँ पर अहम है, जहाँ कंप्यूटर को किसी भाषा में बोले गए कमांड (आदेश) को समझना पड़ता है और उपयोगकर्ता के अनुरोध के जवाब में आवश्यक कार्य किया जाता है।

इसका एक उदाहरण इस तरह है- मुमकिन है कि उपयोगकर्त्ता टेलीफोन पर कुछ अन्य जानकारी प्राप्त करना चाहता हो और कंप्यूटर को बोला गया कमांड समझना होगा और जरूरी सूचना मुहैया कराना होगा।

एएसआर प्रणाली प्रयोगशाला में आधा दर्जन भाषाएँ उपलब्ध है, लेकिन तब तक पूरी तरह परिपक्व नहीं है। सटीकता और प्रदर्शन जैसे पैमाने को आगे बढ़ाने के लिए शोध करने की जरूरत है।

ऑप्टिकल कैरेक्टर रिकॉग्निशन (ओसीआर) :-

इसके तहत तकनीक के दो क्षेत्र हैं-

- ऑप्टिकल कैरेक्टर रिकॉग्निशन (ओसीआर), और
- ऑनलाइन हैंडराइटिंग रिकॉग्निशन (ओएचडब्ल्यूआर)

ओसीआर छपी हुई किताब को टेक्स्ट के रूप में बदलता है। जब किसी किताब की स्कैनिंग हार्डकॉपी में की जाती है, तो आउटपुट के रूप में उपलब्ध स्कैन वाली इमेज का सर्च, मशीन अनुवाद, स्पीच प्रोसेसिंग आदि में इस्तेमाल नहीं किया जाता है। ओसीआर पेज की स्कैन इमेज लेता है, अक्षरों को पहचानता है और इसे टेक्स्ट के रूप में बदल देता है।

तकरीबन दर्जनभर भारतीय भाषाओं के लिए यह तकनीक नमूना के रूप में उपलब्ध है। इसे उत्पाद में बदलने की जरूरत है। साथ ही, इसे डिजिटल लाइब्रेरी को भी उपलब्ध कराए जाने की जरूरत है, जो भारतीय भाषाओं की किताबों का स्कैन संग्रह रखता है।

अन्य तकनीक के क्षेत्र -

शब्द सिंधु -

भारत सरकार की एक महत्वपूर्ण परियोजना है, जिसे राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय और केंद्रीय हिंदी निदेशालय और वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, शिक्षा मंत्रालय ने मिलकर साकार किया है। सात लाख से भी अधिक शब्दों का एक विशाल शब्दकोश है। उसका उद्देश्य हिंदी को समृद्ध और आधुनिक स्वरूप प्रदान करना है।

आदि वाणी :-

आदि वाणी एक कृत्रिम बुद्धि आधारित अनुवाद उपकरण है जो आदिवासी भाषाओं को समर्पित भविष्य के एक बड़े भाषा मॉडल की नींव रखता है। इसके तहत वाणी पहचान और वाणी संश्लेषण तकनीकों का उपयोग करके लुप्तप्राय भाषाओं के डेटा बैंक तैयार किए जा रहे हैं। यह पहल भाषा विविधता को तकनीकी माध्यमों से संरक्षित रखने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

निष्कर्ष :-

भारतीय भाषाओं के लिए भाषा तकनीक का उपयोग करने के लिए परिस्थितियाँ काफी अनुकूल हैं। बड़ी संख्या में डिजिटल उपकरणों का उपयोग करने वाले ऐसे लोग है, जो अंग्रेजी नहीं जानने के कारण अपनी भाषा में जानकारी चाहते हैं। अंग्रेजी में बड़ी मात्रा में सामग्रियां उपलब्ध है, लेकिन भारतीय भाषाओं में उस तरह की स्थिति नहीं है। लिहाजा, भारतीय भाषाओं में बड़े पैमाने पर जरूरतें पूरी करने की दरकार है।

भारत सरकार द्वारा आरंभ की गई योजनाएँ जैसे कंठस्थ, शब्द सिंधु और आदि वाणी भारतीय भाषाओं के तकनीकी उत्थान की दिशा में मील का पत्थर साबित हो रही है। इन पहलों ने भाषा, संस्कृति और तकनीक के बीच एक सशक्त सेतु का निर्माण किया है। विकसित भारत @2047 से दृष्टिकोण में ये पहले अत्यंत महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि ये ऐसे भारत की नींव रख रही हैं जहाँ प्रत्येक व्यक्ति अपनी भाषा में डिजिटल ज्ञान अर्जित कर तकनीकी रूप से सशक्त राष्ट्र निर्माण में भागीदारी निभा सकें। इस प्रकार, भारतीय भाषाओं पर आधारित तकनीकी टूल्स वह आधारशिला है जिन पर 2047 का आत्मनिर्भर, समावेशी और सांस्कृतिक रूप से जागरूक विकसित भारत खड़ा होगा।

'जिस प्रकार बांग्ला भाषा के द्वारा बंगाल में एकता का पौधा पल्लवित हुआ है,
उसी प्रकार हिन्दी भाषा के साधारण भाषा होने से समस्त भारतवासियों में
एकता तरु की कलियाँ अवश्य ही खिलेंगी।'

- शारदाचरण मित्र

नम्रता सिंह
वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा)
अंचल कार्यालय, नई दिल्ली

भारतीय भाषाएँ एवं स्थानीय पर्व-त्यौहार : राजस्थान के संदर्भ में

भारतवर्ष की सांस्कृतिक आत्मा उसकी भाषाई विविधता और पर्व-त्यौहारों की बहुलता में निहित है। इस देश की सभ्यता किसी एकल धर्म, एक भाषा या एक संस्कृति पर आधारित नहीं रही है, बल्कि यह बहुस्तरीय, बहुभाषी और बहु सांस्कृतिक धाराओं का संगम रही है। यदि हम इस सांस्कृतिक माला के रत्नों में से राजस्थान को चुनें, तो यह स्पष्ट होता है कि यहाँ की भाषाएँ और स्थानीय पर्व-त्यौहार न केवल सामाजिक जीवन को दिशा देते हैं, बल्कि पहचान, परंपरा और आत्मगौरव का एक विस्तृत और जीवंत संसार भी रचते हैं। "राजस्थान की मिट्टी" के रंग, गंध और गूंज उसकी बोलियों और त्यौहारों के मेल से ही संभव हुई है।

भाषाई परिदृश्य :राजस्थान की बहुरंगी भाषिक धरोहर

राजस्थान में बोली जाने वाली भाषाएँ किसी एकल ध्वनि-संस्कृति की परिचायक नहीं है, बल्कि भौगोलिक, ऐतिहासिक और जातीय विविधताओं से प्रेरित कई स्वर-संस्कृतियों की संगति है। यद्यपि 'राजस्थानी' को एक समग्र भाषा के रूप में देखा जाता है, परंतु इसके अंतर्गत आने वाली बोलियाँ - **मारवाड़ी, मेवाड़ी, ढूंढाड़ी, शेखावटी, हाड़ौती, बागड़ी, मेवाती आदि,** अलग-अलग क्षेत्रों की सांस्कृतिक परिचायक हैं। प्रत्येक बोली अपने-अपने भूगोल, इतिहास और समाज की सजीव अभिव्यक्ति है।

उदाहरण के लिए, मारवाड़ी भाषा का प्रयोग जोधपुर, बाड़मेर, बीकानेर और नागौर के क्षेत्रों में होता है। यह भाषा वीर रस, इतिहास-बोध और राजपूत गौरव से ओत-प्रोत है। मेवाड़ी, जो उदयपुर और चित्तौड़ के अंचलों में बोली जाती है, उसमें कोमल भावनाएँ, धार्मिक चेतना और शृंगारिक प्रवृत्ति की अधिकता है। ढूंढाड़ी, जयपुर क्षेत्र की भाषा है, जिसमें शिष्ट, मृदु और धार्मिक अभिव्यक्तियाँ सुनाई देती हैं। इन बोलियों की विशेषता यह है कि ये केवल संप्रेषण के साधन नहीं हैं, बल्कि संस्कृति की वाहक भी हैं। लोकगीतों, कथाओं, भजनों, कहावतों और परंपराओं के माध्यम से ये भाषा-रूप लोक जीवन को निरंतरता प्रदान करते हैं।

यह उल्लेखनीय है कि राजस्थान की बोलियाँ भारतीय आर्य भाषाओं की पश्चिमी उपशाखा से संबंध रखती हैं, परंतु उनमें क्षेत्रीय संस्कार इतने प्रबल हैं कि वे हिंदी या संस्कृत की छाया से अलग एक स्वतंत्र पहचान बनाती हैं। यही कारण है कि राजस्थानी भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित करने की माँग वर्षों से चल रही है।

त्यौहारों की संस्कृति : लोक जीवन के रंग

राजस्थान में पर्व-त्यौहार केवल ऋतुओं के आगमन या धार्मिक तिथियों के निर्वाह का माध्यम नहीं हैं, वे जीवन के संघर्षों के बीच उत्साह खोजने की कला का उत्सव हैं। इन उत्सवों में इतिहास, धर्म, प्रकृति और सामाजिक सहभागिता का समावेश होता है। यहाँ के पर्व मनुष्य और प्रकृति के संबंध, देवताओं और लोक-मान्यताओं की कड़ी तथा समाज की सामूहिक चेतना को उजागर करते हैं।

गणगौर, तीज, बसंती दूज, गोगा नवमी, शीतला सप्तमी, हल्दीघाटी मेला, पुष्कर मेला, नागौर मेला, बनेश्वर धाम का मेला, डोल ग्यारस, मारवाड़ उत्सव और **डेजर्ट फेस्टिवल** जैसे अनगिनत त्यौहार न केवल धार्मिक या पारंपरिक हैं, बल्कि भाषा, नृत्य, संगीत, वेशभूषा, पाक-कला और सामाजिक संरचना के अनेक

स्तरों को सक्रिय करते हैं।

उदाहरण के लिए गणगौर का पर्व, जो विशेषत: महिलाओं का पर्व है, लोक भाषा में गाए जाने वाले गीतों और भजनों से भरा होता है। 'ईसर आयो, गणगौर आयी', 'म्हारी मायड़ देश री गणगौर' जैसे गीत केवल धार्मिक भावना ही नहीं, बल्कि स्त्री की सामाजिक आकांक्षा और लोक-संस्कृति की प्रतीकात्मक व्यंजना को भी सामने लाते हैं। ये गीत जब ढूंढाड़ी या मेवाड़ी में गाए जाते हैं, तो उनके लय और शब्दों में क्षेत्रीय स्वाद भर उठता है।

तीज का पर्व मानसून की प्रथम बूंदों के साथ महिलाओं के मन की उमंग और श्रृंगार का प्रतीक है। इस अवसर पर 'तीज के गीत' जो किसी गायक या कवि की रचना नहीं, बल्कि पीढ़ियों से स्त्रियों द्वारा रचे-बसे जीवन अनुभव से उपजे हैं, बोली की आत्मा को जीवित रखते हैं।

राजस्थान के मेलों का स्वरूप भी विशिष्ट है। **पुष्कर का मेला** एक ओर जहाँ तीर्थ और साधना का केंद्र है, वहीं दूसरी ओर ऊँटों, घोड़ों और पशुधन के लेन-देन का भी अंतरराष्ट्रीय मंच है। इस मेले में लोक-कलाएँ, जन-गीत, संवाद-शैली और बाजार में होने वाली बातचीत भी स्थानीय बोलियों का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। स्थानीय लोक नाटक हो, कठपुतली का संवाद या फिर हाट-बाजार में दुकानदार और ग्राहक की वार्ता, मेले की संस्कृति में बोली की जीवंतता हर कदम पर दिखाई देती है।

बनेश्वर मेला, जो डूंगरपुर जिले में आयोजित होता है, आदिवासी जनजातियों, विशेषकर भीलों का सबसे पवित्र और बड़ा पर्व है। यहाँ गाए जाने वाले गीत, भजनों की शैली, पूजा विधि और भाषाई प्रयोग आदिवासी बोली की अमिट छाप छोड़ते हैं। लोकसंगीत और नृत्य में प्रयुक्त शब्द आदिवासी परंपरा और भाषा के संरक्षक बन जाते हैं।

भाषा और त्यौहार: सहअस्तित्व का सेतु

जब हम राजस्थान की भाषा और पर्व-त्यौहारों के परस्पर संबंध को देखते हैं, तो यह स्पष्ट होता है कि ये दोनों तत्व अलग-अलग नहीं, बल्कि एक-दूसरे को संबल और स्वरूप प्रदान करने वाले स्तंभ हैं। भाषा उन त्यौहारों को उनके गीतों, मंत्रों, प्रतीकों और संवादों के माध्यम से अर्थ देती है। वहीं, त्यौहार भाषाओं को जीवित रखने का कार्य करते हैं। वे बोलियों को केवल बोलचाल तक सीमित नहीं रखते, बल्कि उन्हें संगीत, नृत्य, कथा, उत्सव और सामूहिक स्मृति का हिस्सा बना देते हैं।

राजस्थान में त्यौहार ही वह अवसर हैं जब एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी को नृत्य करते समय, गीत गाते समय, कथा कहते समय, पूजा करते समय अपनी भाषा सिखाती है। ये त्यौहार सामाजिक शिक्षा के उपकरण भी बन जाते हैं, जहाँ भाषा केवल सीखने की वस्तु नहीं, बल्कि जीवन जीने की प्रक्रिया बन जाती है।

त्यौहारों में प्रयुक्त भाषाई अभिव्यक्तियाँ बहुत कुछ कहती हैं। राजस्थान की लोक परंपरा में 'मांड', 'पिंगल', 'फड़' और 'कवित्त' जैसी भाषिक एवं काव्यात्मक विधाएँ विद्यमान हैं, जो त्यौहारी प्रसंगों में विशेष रूप से प्रयोग में लाई जाती हैं। ये विधाएँ भाषा को साहित्य से, पर्व को दर्शन से तथा समाज को उसकी परंपरा से जोड़ती हैं।

सांस्कृतिक संरक्षण की चुनौती

वैश्वीकरण, शहरीकरण और तकनीकी एकरूपता के इस युग में राजस्थान की लोक भाषाएँ और पारंपरिक पर्व एक प्रकार के संकट से गुजर रहे हैं। जहाँ एक ओर स्कूलों में अंग्रेजी का बढ़ता प्रभाव स्थानीय बोलियों को हाशिए पर डाल रहा है, वहीं दूसरी ओर त्यौहारों के बाजारीकरण से उनका पारंपरिक सौंदर्य प्रभावित हो रहा है। गाने अब रिकॉर्डेड, संवाद स्क्रिप्टेड और पोशाकें डिजाइनर होते जा रहे हैं। इन परिवर्तनों में स्थानीय भाषा का वह सहज प्रयोग कम हो रहा है, जो इन उत्सवों की आत्मा थी।

राजस्थानी भाषा को अब तक संवैधानिक मान्यता नहीं मिली है, जिससे उसका शैक्षणिक, प्रशासनिक और साहित्यिक विकास बाधित होता रहा है। यदि इन बोलियों को उचित संरक्षण, शिक्षण और

सार्वजनिक मंच नहीं मिला, तो ये आने वाली पीढ़ियों में केवल शेष आख्यान बनकर रह जाएंगी। इसी प्रकार, यदि त्योहार केवल पर्यटन और उद्योग का माध्यम बनकर रह गए, तो उनका सामाजिक, भाषिक और सांस्कृतिक उद्देश्य विकृत हो जाएगा।

निष्कर्ष: आत्मसंवेदन की पुनर्स्थापना

राजस्थान की भाषाएँ और त्यौहार न केवल अतीत की विरासत हैं और न ही वर्तमान की सजावट। वे उस भूगोल की आत्मा हैं, जिनमें जन-जीवन की स्मृति, आकांक्षा और अभिव्यक्ति संचित है। हमें इन्हें केवल एक सांस्कृतिक उत्सव या एक भाषाई प्रयोगशाला के रूप में नहीं देखना चाहिए, बल्कि इन्हें आत्म-ज्ञान और सांस्कृतिक पुनरुद्धार के सेतु के रूप में समझना चाहिए।

भारतीय समाज में जहाँ एक ओर विविधता में एकता की भावना है, वहीं राजस्थान के पर्व-त्यौहार यह दर्शाते है कि विविधताओं को जीवंत बनाए रखना ही हमारी एकता की सबसे मजबूत नींव है। राजस्थानी भाषाओं और पर्व-त्यौहारों को पुनर्संयोजन, पुन:स्थापन और पुनर्नवीकरण की आवश्यकता है ताकि वे सिर्फ अतीत के चित्र न बनें, बल्कि भविष्य की चेतना भी बनें।

अत: यह आवश्यक है कि नीति-निर्माता, साहित्यकार, कलाकार और सामान्य नागरिक के रूप में हम सभी मिलकर यह सुनिश्चित करें कि राजस्थानी भाषाएँ केवल बोली नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति की एक जीवंत शाखा बनी रहें और राजस्थान के त्यौहार केवल तिथि-आधारित उत्सव नहीं, बल्कि लोकजीवन के सतत प्रेरणा-स्रोत बने रहें।

पृष्ठ 17 का शेषांश

भाषा की इस विविधता के बीच अंग्रेजी भाषा भी शामिल है। सच कहा जाए तो हिंदी में ना केवल अंग्रेजी शब्द जुड़े है, बल्कि दूसरी भारतीय भाषाओं के शब्द भी लोगों की जुबान पर आसानी से चढ़े हुए हैं। इस प्रकार भाषा कोई भी हो, समय के साथ उसमें कुछ ना कुछ परिवर्तन अवश्यंभावी है। अंग्रेजों द्वारा भारत पर लंबी अवधि तक शासन किए जाने के कारण यह भी स्वाभाविक है कि हिंदी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं ने एक दूसरी भाषा के शब्दों को अंगीकार कर लिया है। हिंदी भाषा और अन्य भाषाओं में एक ऐसा संबंध है जिसे हम चाह कर भी एक दूसरे से अलग नहीं कर सकते एवं इससे एक प्रकार का समन्वय, सामंजस्य एवं भाषाई समृद्धि का उद्भव हुआ, जिससे हिंदी और भी अधिक पल्लवित एवं पुष्पित हो रही है, क्योंकि एक समृद्ध भाषा वही मानी जाती है जो सदैव दूसरी भाषाओं को स्वयं में एकाकार करें एवं सम्मिलित होकर अपने अस्तित्व की खुशबू को बिखेरने के साथ-साथ दूसरी भाषाओं को भी सुगंधित करें।

अनुपम ज्योति
वरिष्ठ प्रबंधक
प्रधान कार्यालय

सरकारी प्रयास - भारतीय भाषा अनुभाग की स्थापना

भारत की पहचान उसकी विविधता में निहित है, भाषाओं की विविधता, जो न केवल संवाद का माध्यम है बल्कि संस्कृति, संवेदना और सभ्यता की आत्मा भी है। इसी भाषाई चेतना को पुन: प्रतिष्ठित करने के लिए 6 जून 2025 को केंद्रीय गृह मंत्री श्री अमित शाह ने नई दिल्ली में भारतीय भाषा अनुभाग का शुभारंभ किया। यह पहल केवल एक प्रशासनिक सुधार नहीं, बल्कि उपनिवेशवाद की मानसिकता से मुक्ति और मातृभाषाओं में शासन की पुनर्स्थापना का ऐतिहासिक कदम है।

आजादी के समय भारत का प्रशासनिक ढांचा अंग्रेजी के प्रभुत्व में रहा। केंद्र और गैर-हिंदी भाषी राज्यों के बीच संवाद तथा फाइल कार्य में अंग्रेजी ही मुख्य माध्यम थी। इससे न केवल भाषाई असमानता बढ़ी, बल्कि नागरिकों की भागीदारी भी सीमित रही। अपनी राजभाषा हिंदी होते हुए कार्यालयीन स्तर पर अंग्रेजी का प्रभुत्व भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र के लिए विडंबना थी।

भारतीय भाषा अनुभाग इस असमानता को समाप्त करने का प्रयास है। इसका उद्देश्य है कि केंद्र और राज्यों के बीच संवाद मातृभाषाओं में हो, जिससे शासन अधिक पारदर्शी, समावेशी और जनोन्मुखी बने। भारतीय भाषा अनुभाग वह स्वर्णिम द्वार है, जिससे भारत अपनी भाषाई आत्मा को पुन: प्रतिष्ठित कर रहा है। गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के अंतर्गत स्थापित यह इकाई, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के उस मूल मंत्र को साकार करती है जो कहता है- सोच अपनी भाषा में, निर्णय अपनी संस्कृति में।

स्थापना और संरचना

भारतीय भाषा अनुभाग को गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग के अंतर्गत एक पूर्ण इकाई के रूप में स्थापित किया गया है। इसके साथ ही राजभाषा विभाग अब एक सम्पूर्ण विभाग बन गया है, जो न केवल हिंदी बल्कि सभी भारतीय भाषाओं के संवर्धन के लिए कार्य करेगा।

मुख्य उद्देश्य:

- प्रशासन को विदेशी भाषाओं के प्रभाव से मुक्त करना।
- सोच, विश्लेषण और निर्णय प्रक्रिया को मातृभाषाओं में लाना।
- भारतीय भाषाओं के बीच सार्वभौमिक अनुवाद प्रणाली विकसित करना।
- भाषाई समावेशन के माध्यम से शासन को अधिक लोकतांत्रिक बनाना।

तकनीकी क्रांति: कंठस्थ 3.0

इस पहल का सबसे बड़ा आधार है तकनीकी सहयोग। सी-डैक के साथ मिलकर सरकार ने कंठस्थ 3.0 बहुभाषी अनुवाद प्रणाली विकसित की है। यह प्रणाली संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित 15 भारतीय भाषाओं के बीच उच्च गुणवत्ता वाला अनुवाद सुनिश्चित करेगी।

कंठस्थ 3.0 की विशेषताएँ:

- ट्रांसलेशन मेमोरी (टीएम) और न्यूरल मशीन ट्रांसलेशन (एनएमटी) तकनीक।
- रीयल-टाइम अनुवाद सुविधा।
- ऑटोमैटिक स्पीच रिकग्निशन (एएसआर) और चैटबॉट इंटीग्रेशन।
- विभिन्न फाइल प्रारूपों में द्विभाषी डाउनलोड सुविधा।

यह प्रणाली न केवल पत्राचार बल्कि नीतिगत दस्तावेजों, नोटशीट और

शेष पृष्ठ 30 पर

अमृत रंजन
प्रबंधक
अंचल कार्यालय, पटना

डिजिटल युग में भारतीय भाषाओं का पुनर्जागरण

कल्पना कीजिए, यदि आपकी मातृभाषा एक सुबह आपको एक ई-मेल भेजे, जिसमें लिखा हो:

प्रिय मानव,

सदियों से तुम्हारे दिल की धड़कनों में मैं बसी रही। तुम्हारे गीतों में, कहानियों में, लोरियों में, शोक में और प्रेम में। किंतु अब मैं डिजिटल स्क्रीन पर अपना प्रतिबिंब ढूँढ़ रही हूँ। क्या तुम मुझे फिर से स्थान दोगे?

सप्रेम,

तुम्हारी भाषा।

क्या आप इस ई-मेल का उत्तर देंगे?

आज हम एक ऐसे मोड़ पर खड़े हैं जहाँ भारतीय भाषाएँ पुन: अपनी जगह माँग रही हैं-डिजिटल स्पेस में, सोशल मीडिया में, शिक्षा में और हमारी दिनचर्या में। यह केवल भाषाओं का पुनर्जागरण नहीं है, यह हमारी सांस्कृतिक चेतना की डिजिटल पुनर्व्याख्या है।

जब हम 'पुनर्जागरण' शब्द सुनते हैं, तो हमारी कल्पना में एक ऐसा युग उभरता है जिसमें चेतना, संस्कृति और ज्ञान की नवीनीकृत लहर समाज में बहने लगती है। भारतीय भाषाओं का पुनर्जागरण इस समय एक नए मोड़ पर है, जो तकनीक और परंपरा के संगम से उत्पन्न हुआ है। यह युग **डिजिटल युग** है, एक ऐसा समय जब सूचनाओं की गति प्रकाश से तेज है और संवाद के साधन पहले से कहीं अधिक शक्तिशाली, सुलभ और सर्वव्यापी हो चुके हैं।

भारतीय भाषाएँ केवल संवाद के उपकरण नहीं हैं, वे हमारी सभ्यता, संस्कृति, दर्शन, इतिहास और लोकजीवन की संवाहक हैं। संस्कृत से लेकर तमिल, हिंदी से लेकर कश्मीरी, कन्नड़ से मलयालम तक प्रत्येक भाषा अपने भीतर ज्ञान का एक अलग ब्रह्मांड समेटे हुए है। लेकिन उपनिवेशवाद, औद्योगिक क्रांति और वैश्वीकरण की दौड़ में इन भाषाओं की स्थिति कहीं न कहीं हाशिए पर चली गई थी। अंग्रेजी का प्रभुत्व इतना बढ़ा कि अनेक भारतीय भाषाएँ अपने ही देश में 'गैरजरूरी' या 'पुरानी' समझी जाने लगीं।

जब इंटरनेट और स्मार्टफोन आम जनता तक पहुँचे, तो प्रारंभ में ऐसा प्रतीत हुआ कि यह तकनीकी क्रांति भारतीय भाषाओं के लिए एक और संकट बनकर आएगी। अंग्रेजी भाषा में आधारित इंटरफेस, सर्च इंजन, सोशल मीडिया और ऐप्स की प्रधानता ने भाषाई विविधता को संकुचित करने का खतरा उत्पन्न कर दिया था, परंतु समय के साथ परिदृश्य बदलने लगा। जैसे-जैसे डिजिटल तकनीक ने गाँवों, कस्बों और दूर-दराज के क्षेत्रों में प्रवेश किया, वहाँ के लोग अपनी भाषा में संवाद करने लगे। फेसबुक पर भोजपुरी में पोस्ट, यूट्यूब पर राजस्थानी में लोकगीत, ट्विटर पर तमिल में विचार, यह सब एक नई चेतना का संकेत था।

डिजिटल युग में सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह हुई है कि अब 'प्रकाशक' और 'पाठक' के बीच की दूरी समाप्त हो गई है। कोई भी व्यक्ति ब्लॉग, यूट्यूब चैनल, सोशल मीडिया या पॉडकास्ट के माध्यम से अपनी भाषा में विचार व्यक्त कर सकता है। यह **भाषाई लोकतंत्र** है - जिसमें हर व्यक्ति अपनी मातृभाषा में आत्मविश्वास के साथ बोल और लिख सकता है। हिंदी के ब्लॉग, मराठी पॉडकास्ट, पंजाबी वेब सीरीज और बंगाली ई-पत्रिकाओं ने यह सिद्ध कर दिया है कि डिजिटल माध्यम किसी एक भाषा का बंधक नहीं है। भाषाओं का यह डिजिटल पुनर्जागरण किसी एक संस्था द्वारा संचालित नहीं है, बल्कि लाखों उपयोगकर्ताओं की सामूहिक चेतना से उत्पन्न हो रहा है।

डिजिटल युग में हिंदी भाषा की भूमिका तकनीकी नवाचार और वैश्विक पहुँच के माध्यम से महत्वपूर्ण हो गई है। यह भाषा अब न केवल साहित्य और संस्कृति तक सीमित है, बल्कि सोशल मीडिया, ब्लॉगिंग और कृत्रिम बुद्धिमत्ता जैसे क्षेत्रों में भी एक शक्तिशाली माध्यम बन गई है। डिजिटल साक्षरता के बढ़ने और विभिन्न ऑनलाइन प्लेटफार्मों के माध्यम से हिंदी सामग्री की बढ़ती माँग के कारण हिंदी एक प्रासंगिक और व्यावसायिक भाषा के रूप में विकसित हो रही है।

भारत सदा से भाषाओं की धरती रही है। यहाँ पर नदियों की तरह भाषाएँ भी प्रवाहित होती रही हैं- कहीं संस्कृत में वेदों की गूंज, कहीं तमिल में संगम साहित्य की गहराई, तो कहीं अवधी में तुलसीदास की रामकथा। भारत की भाषाई विविधता विश्व में अनुपम है- 22 अनुसूचित

भाषाएँ,100 से अधिक प्रमुख भाषाएँ और 1600 से अधिक मातृभाषाएँ।

अंग्रेजों के आगमन के साथ भाषा को सत्ता, प्रशासन और शिक्षा का माध्यम बना दिया गया। अंग्रेजी को केवल भाषा नहीं बल्कि प्रगति की सीढ़ी बना दिया गया। धीरे-धीरे भारतीय भाषाएँ केवल घर और हृदय तक सीमित रह गईं। साहित्य और संस्कृति तो सुरक्षित रहे, परंतु नौकरी, विज्ञान और तकनीक अंग्रेजी के अधीन हो गए। स्वतंत्रता के बाद भी भारतीय भाषाओं को वह स्थान नहीं मिला, जिसकी वे अधिकारी थीं। हिंदी को राष्ट्रभाषा घोषित करने का प्रयास किया गया परंतु विरोध और क्षेत्रीय असंतुलन के कारण 'राजभाषा' का समझौता किया गया। इनके बावजूद तकनीकी शिक्षा, प्रशासन और न्याय प्रणाली इन सभी क्षेत्रों में अंग्रेजी का वर्चस्व बना रहा।

1990 के दशक में जब भारत ने उदारीकरण का मार्ग अपनाया विश्व से संवाद के लिए अंग्रेजी को और अधिक प्रमुखता मिलने लगी। इस बीच स्थानीय भाषाओं को गाँव की "कमजोर" या "अप्रचलित" भाषा कहकर हाशिए पर डाल दिया गया। वर्ष 2000 के बाद भारत में इंटरनेट ने धीरे-धीरे अपनी जड़ें जमानी शुरू कीं। फिर आया मोबाइल क्रांति का दौर और उसके बाद स्मार्टफोन का प्रसार हुआ। वर्ष 2016 के बाद जब डेटा की कीमतों में भारी गिरावट आई तब ग्रामीण और कस्बाई भारत भी डिजिटल हो गया।

डिजिटल इंटरफेस, सर्च इंजन, वेबसाइटें, सोशल मीडिया, सब कुछ अंग्रेजी केंद्रित था। गूगल पर हिंदी में टाइप करना एक चुनौती थी। क्षेत्रीय सामग्री या तो अनौपचारिक थी या अनुपस्थित। ऐसा लगने लगा कि डिजिटल युग भारतीय भाषाओं के लिए ताबूत की अंतिम कील साबित होगी। लेकिन यहीं से हुआ मोड़, जैसे ही गाँव-गाँव में स्मार्टफोन पहुँचे, वहाँ के लोग अपनी भाषा में वीडियो, संदेश और सामग्री साझा करने लगे। फेसबुक पर बघेली में पोस्ट, यूट्यूब पर छत्तीसगढ़ी गाने, व्हाट्सएप पर भोजपुरी में चुटकुले, यह सब अचानक नहीं हुआ, बल्कि एक भाषाई ऊर्जा विस्फोट की शुरुआत थी।

डिजिटल युग ने संचार के पारंपरिक ढाँचों को पूरी तरह बदल दिया है। जहाँ पहले केवल मुट्ठीभर लोग ही अपने विचारों को पुस्तकों, समाचार पत्रों या टीवी चैनलों के माध्यम से व्यक्त कर सकते थे, वहीं अब हर व्यक्ति एक प्रकाशक बन गया है। पहले साहित्य का प्रकाशन एक विशिष्ट प्रक्रिया थी जिसमें लेखक को प्रकाशकों की स्वीकृति की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी, परंतु अब डिजिटल पब्लिशिंग और ई-बुक्स ने साहित्य को लोकतांत्रिक बना दिया है। हिंदी, बांग्ला, गुजराती, उर्दू और अन्य भाषाओं के अनेक नवोदित लेखक अब डिजिटल माध्यम से अपने विचारों को पाठकों तक पहुँचा रहे हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म ने क्षेत्रीय भाषाओं को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाया है। यहाँ पाठक और लेखक के बीच एक जीवंत संवाद भी होता है, जिससे भाषा और विषयवस्तु का निरंतर विकास होता रहता है। यह परिवर्तन विशेष रूप से भारतीय भाषाओं के लिए एक क्रांतिकारी अवसर साबित हुआ है।

आज एक गाँव का किसान अपने खेत की समस्या पर अपनी बोली में वीडियो बनाकर यूट्यूब पर साझा कर सकता है। एक गृहिणी अपनी भाषा में अपने पाक कला के वीडियो इंस्टाग्राम पर अपलोड कर सकती है। एक बुजुर्ग अपनी शैली में अपनी जीवन की कहानियाँ फेसबुक पर लिख सकता है। अब भाषा कोई बाधा नहीं, बल्कि पहचान का प्रतीक बन गई है। हिंदी में ट्विटर ट्रेंड्स चलने लगे हैं। तमिल, मराठी और बांग्ला में मीम्स वायरल होते हैं। डोगरी में शायरी, मैथिली में कविताएँ और कन्नड़ में पॉडकास्ट अब आम हो चले हैं। यह सब दर्शाता है कि डिजिटल माध्यमों ने भाषाओं को लोकप्रिय संस्कृति में स्थान दिलाया है। अब संवाद केवल दिल्ली या मुंबई से नहीं होता, बल्कि बीकानेर, सागर, दरभंगा, शिलांग और कोहिमा जैसे शहरों से भी होता है। भाषाएँ भौगोलिक सीमाओं को पार कर रही हैं और एक व्यापक डिजिटल समुदाय का निर्माण कर रही हैं।

डिजिटल शिक्षा और तकनीकी उन्नति ने भारतीय भाषाओं के लिए एक नया क्षितिज खोल दिया है। पहले जहाँ शिक्षा और सूचना का अधिकांश भाग केवल अंग्रेजी में उपलब्ध था, अब वह तेजी से विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनूदित और प्रस्तुत किया जा रहा है। गूगल ट्रांसलेट, चैटजीपीटी, माइक्रोसॉफ्ट ट्रांसलेट जैसे साधनों ने भाषा-भेद को पाटने का कार्य किया है। अब एक तमिल भाषी व्यक्ति हिंदी में समाचार पढ़ सकता है या एक मराठी लेखक अपनी कहानियों का अंग्रेजी में अनुवाद कर दुनिया भर के पाठकों तक पहुँचा सकता है। इसके अतिरिक्त, कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित वॉयस रिकग्निशन और टेक्स्ट-टू-स्पीच तकनीकों ने उन लोगों के लिए भी डिजिटल क्षेत्र को सुलभ बनाया है जो पढ़ या लिख नहीं सकते परंतु बोल सकते हैं। अब एक बुजुर्ग भी हाथ से टाइप किए बिना अपनी भाषा में मोबाइल से संवाद भेज सकता है। गूगल असिस्टेंट, एलेक्सा और सिरी अब हिंदी, तमिल, बांग्ला और अन्य भाषाओं में कमांड समझने लगे हैं। यह समावेशिता भारतीय भाषाओं के विकास को नई दिशा दे रही है।

नई शिक्षा नीति ने मातृभाषा में शिक्षा पर विशेष बल दिया है। डिजिटल शिक्षा प्लेटफॉर्म अब क्षेत्रीय भाषाओं में भी पाठ्यक्रम उपलब्ध करा रहे हैं। यूट्यूब पर हजारों शिक्षक अब हिंदी, गुजराती, तेलुगू और बांग्ला में विषय समझा रहे हैं। इससे छात्रों में समझ की गहराई, सांस्कृतिक जुड़ाव और सीखने की आत्मीयता उत्पन्न हो रही है।

साहित्य भारतीय भाषाओं का एक बड़ा खजाना है, परंतु डिजिटल युग से पहले वह पुस्तकालयों, प्रकाशकों और बड़े शहरों तक ही सीमित था। आज, साहित्य डिजिटल माध्यमों के जरिए घर-घर और स्क्रीन-स्क्रीन तक पहुँच गया है। प्लेटफॉर्म जैसे प्रतिलिपि, योरकोट और स्टोरीमिरर ने क्षेत्रीय भाषाओं में हजारों लेखकों को मंच प्रदान किया है। कोई भी लेखक अब अपने मोबाइल से कविता, कहानी, लेख प्रकाशित कर सकता है और पाठकों से तुरंत प्रतिक्रिया प्राप्त कर सकता है। इन प्लेटफॉर्म पर हिंदी, मराठी, तमिल, उर्दू, बांग्ला, तेलुगु आदि भाषाओं में करोड़ो शब्दों का साहित्य लिखा और पढ़ा जा चुका है। स्पॉटिफाई, गाना और पॉकेट एफएम जैसे ऑडियो प्लेटफॉर्म अब हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में ऑडियोबुक, कहानियाँ, नाटक और ज्ञानवर्धक पॉडकास्ट उपलब्ध करा रहे है। यह उन लोगों के लिए भी वरदान है जो पढ़ नही सकते, पर सुन सकते है। ऑडियो माध्यम ने साहित्य को श्रवणीय लोककला में बदल दिया है जैसे पुराने समय में कथावाचक गाँवों में कहानियाँ सुनाया करते थे।

आज के युवा अब अंग्रेजी में नहीं, बल्कि अपनी मातृभाषा में यूट्यूब चैनल चला रहे हैं, व्यंग्य वीडियो बना रहे हैं, स्टैंडअप कॉमेडी कर रहे हैं और डिजिटल आर्ट रच रहे हैं। भाषाएँ अब केवल "गंभीर साहित्य का माध्यम नहीं, बल्कि मनोरंजन, राजनीति, रुझान और संवाद" का सशक्त मंच बन चुकी हैं। डिजिटल युग ने जहाँ भाषाओं को नए पंख दिए हैं, वहीं कुछ गंभीर चुनौतियाँ भी सामने आई हैं। यदि इन पर ध्यान नहीं दिया गया तो यह पुनर्जागरण अधूरा और असमान रह सकता है।

1. सामग्री की गुणवत्ता और विश्वसनीयता

डिजिटल माध्यम पर किसी भी व्यक्ति को सामग्री प्रकाशित करने की स्वतंत्रता है। परंतु इसका दुष्परिणाम यह है कि कई बार भाषाई सामग्री में भाषा की अशुद्धियाँ, तथ्यात्मक गलतियाँ और गंभीरता की कमी दिखाई देती है।

- व्याकरण की अशुद्धियाँ आम हो गई है।
- अनेक पोस्ट बिना स्रोत के साझा किए जाते हैं।
- साहित्यिक गुणवत्ता अक्सर गौण हो जाती है।

2. मानकीकरण और शब्दावली का अभाव

बहुत-सी भारतीय भाषाओं के लिए तकनीकी या वैज्ञानिक शब्दावली आज भी स्पष्ट या सर्वमान्य नहीं है। उदाहरणस्वरूप:

- हिंदी में 'डेटा प्राइवेसी' को क्या कहा जाए?
- उर्दू में 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस' के लिए उपयुक्त शब्द क्या हो?

इस तरह के प्रश्न अनुवाद और शिक्षण में अड़चनें उत्पन्न करते हैं।

3. डिजिटल साक्षरता और संसाधन विषमता

भारत की बड़ी आबादी अब भी डिजिटल दुनिया से पूरी तरह जुड़ी नहीं है। विशेषकर बुजुर्ग, महिलाएँ और आदिवासी समुदायों को तकनीकी प्रशिक्षण, डिवाइस और इंटरनेट कनेक्टिविटी की समस्याएँ झेलनी पड़ती हैं।

4. आर्थिक प्रोत्साहन का अभाव

भारतीय भाषाओं में डिजिटल सामग्री तैयार करने वालों को अवसर पर्याप्त आर्थिक लाभ नहीं मिलता। यूट्यूब या ब्लॉगिंग जैसे प्लेटफॉर्म पर अंग्रेजी कंटेंट को अधिक विज्ञापन और सहयोग प्राप्त होता है।

इन चुनौतियों से पार पाने के लिए समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है:

- राष्ट्रीय भाषा नीति में डिजिटल भाषाई सशक्तिकरण को स्पष्ट प्राथमिकता दी जाए।
- राष्ट्रीय भाषा नीति के तहत क्षेत्रीय भाषाओं में तकनीकी, चिकित्सा और उच्च शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाएं।
- वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली के लिए एआई-आधारित ऑटोमैटिक टर्म जनरेटर विकसित किए जाएं।
- भाषाई संस्थान जैसे केन्द्रीय हिंदी संस्थान आदि को डिजिटल सामग्री निर्माण का प्रशिक्षण देना चाहिए।
- क्षेत्रीय भाषाओं में सामग्री बनाने वालों के लिए राज्य और निजी अनुदान की योजनाएँ शुरू की जाएं।
- ओटीटी प्लेटफॉर्म को स्थानीय भाषाओं में वेब सीरीज और वृत्तचित्र के लिए प्रोत्साहित किया जाएं।

डिजिटल भारत का भविष्य एकभाषीय नहीं, बल्कि बहुभाषीय और समावेशी होगा। डिजिटल युग में जो तकनीक बहुभाषी होगी, वह भारत में लंबे समय तक टिकेगी। इस दिशा में पहले ही कुछ कदम उठाए जा चुके हैं:

- भाषिणी जैसे एआई प्रोजेक्ट्स का उद्देश्य सभी भारतीय भाषाओं को डिजिटल स्पेस में समान अवसर देना है।
- ओपेन सोर्स ओसीआर, टेक्स्ट टू स्पीच और स्पीच टू टेक्स्ट सिस्टम अब तेजी से स्थानीय भाषाओं के लिए विकसित किए जा रहे है।

अब भाषाएँ सिर्फ संप्रेषण का माध्यम नहीं हैं, वे आत्मसम्मान, संस्कृति और लोकतांत्रिक अधिकार की आवाज है। जैसे-जैसे युवा

पीढ़ी अपनी भाषा में कंटेंट बना रही है, वह अपने ही अस्तित्व को एक नए डिजिटल संदर्भ में परिभाषित कर रही है। भाषाएँ अब जाग उठी हैं और यह केवल शुरुआत है। भारतीय भाषाएँ अब फिर से बोल रही हैं – परंतु इस बार कागज पर नहीं, स्क्रीन पर। वे कहानियाँ पॉडकास्ट में सुना रही हैं, कविताएँ इंस्टाग्राम पोस्ट में लिख रही हैं और चैटबॉट्स व वॉयस असिस्टेंट्स के जरिए संवाद कर रही हैं। डिजिटल युग में भारतीय भाषाओं का यह पुनर्जागरण केवल तकनीकी उपलब्धि नहीं, सभ्यता का पुनरुद्धार है। यह उस किसान की भाषा है, जो अब अपने अनुभवों को यूट्यूब पर साझा करता है; उस शिक्षिका की आवाज है, जो हिंदी में विज्ञान पढ़ा रही है; उस किशोरी की रील है, जो अपनी कोंकणी बोली में कविता सुना रही है।

यह यात्रा अभी जारी है और इस यात्रा में हम सब भागीदार हैं। यह समय है कि हम इस पुनर्जागरण को केवल तकनीकी परिवर्तन न मानें, बल्कि इसे संस्कृति की वापसी, गर्व की पुनर्स्थापना और भविष्य के लिए तैयारी के रूप में देखें। डिजिटल युग में भारतीय भाषाओं का यह जागरण न केवल संभावनाओं से भरपूर है, बल्कि हमारी बहुलता और विविधता का उत्सव भी है। अगली बार जब आप कोई पोस्ट लिखें, कोई कहानी सुनाएँ या किसी सवाल का जवाब दें तो एक बार अपनी भाषा को भी मौका दें। शायद वह बहुत कुछ कहना चाहती है – आपके ही माध्यम से।

''मैं दुनिया की सभी भाषाओं की इज्जत करता हूं पर मेरे देश में हिंदी की इज्जत न हो, यह मैं सह नहीं सकता''

- आचार्य विनोबा भावे

पृष्ठ 15 का शेषांश

सामाजिक प्रभाव: भाषा पर समाज और उसके वातावरण का गहरा प्रभाव पड़ता है। विभिन्न सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक कारणों से भाषा में परिवर्तन आते हैं, जो समाज के बदलते हालात और जरूरतों के अनुरूप होते हैं।

पहचान बनाए रखना: बदलावों के बावजूद, भाषा अपनी मूल पहचान और संरचना को किसी न किसी रूप में बनाए रखती है। उदाहरण के लिए, संस्कृत से निकली हिंदी आज भी अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाए हुए है, हालांकि इसमें समय के साथ कई बदलाव आए हैं।

समग्रत: "भाषा की अविरलता" भाषा के उस प्रवाह को दर्शाती है जो परिवर्तन के साथ-साथ भाषा को जीवंत और गतिशील बनाए रखती है, उसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाती है और समय के साथ उसके विकास को सुनिश्चित करती है।

त्यौहारों का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्व

अंकित गुप्ता
सहायक निदेशक
अंचल कार्यालय, कानपुर

भारत विविधताओं का देश है। यहाँ की संस्कृति, परंपराएँ और जीवन-शैली इतनी समृद्ध और रंगीन हैं कि इसे "त्यौहारों का देश" भी कहा जाता है। हर मौसम, हर क्षेत्र और हर धर्म के अपने-अपने पर्व होते हैं। ये त्यौहार केवल धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व तक सीमित नहीं होते, बल्कि सामाजिक, आध्यात्मिक और आर्थिक दृष्टि से भी ये अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

महादेवी वर्मा ने कहा था –

"संस्कृति की सबसे बड़ी पहचान उसके त्यौहार होते हैं, जो जीवन में रंग और उमंग भरते हैं।"

भारतीय जीवन-पद्धति में त्यौहारों का स्थान अत्यंत ऊँचा है। यहाँ प्रत्येक महीने कोई न कोई पर्व या उत्सव मनाया जाता है। दीपावली को प्रकाश और समृद्धि का प्रतीक माना जाता है, तो होली रंगों और मेलजोल का त्यौहार है। रक्षाबंधन भाई-बहन के स्नेह का प्रतीक है, तो ओणम कृषि और फसल कटाई से जुड़ा उत्सव है। ईद भाईचारे और समानता का संदेश देती है, तो क्रिसमस प्रेम और दया का पर्व है।

हरिवंश राय बच्चन ने लिखा है –

"मनुष्य अकेला नहीं जी सकता, उसे समाज की आवश्यकता है और त्यौहार समाज के इस आपसी मिलन का उत्सव है।"

भारत में त्यौहारों के आगमन पर लोग नई-नई वस्तुएँ खरीदते हैं, घरों की सफाई और सजावट करते हैं, नए वस्त्रों की खरीद होती है, मिठाइयाँ और उपहार खरीदे तथा बाँटे जाते हैं और सामाजिक आयोजन एवं यात्राएँ संपन्न होती हैं। इससे बाजारों में मांग अचानक बढ़ जाती है। उपभोग की यह प्रवृत्ति सीधे तौर पर उत्पादन और व्यापार को प्रोत्साहित करती है।

ऐसे अनेक उद्योग है जिन पर त्यौहारों का प्रत्यक्ष प्रभाव परिलक्षित होता है –

1. **मिठाई एवं खाद्य उद्योग –** त्यौहारों के अवसर पर मिठाइयों और विशेष खाद्य पदार्थों की बिक्री कई गुना बढ़ जाती है।
2. **वस्त्र एवं परिधान उद्योग –** दुर्गापूजा, दिवाली, ईद आदि पर्वों पर नए वस्त्र खरीदना एक परंपरा है, जिससे वस्त्र उद्योग को विशेष लाभ प्राप्त होता है।
3. **आभूषण उद्योग –** धनतेरस, अक्षय तृतीया तथा विवाह के मौसम में सोना-चाँदी एवं आभूषणों की खरीदारी में तीव्र वृद्धि होती है।
4. **सजावट एवं उपहार उद्योग** – त्यौहारों पर उपहारों के आदान-प्रदान से सजावटी वस्तुओं एवं उपहार सामग्रियों की मांग अत्यधिक बढ़ जाती है।
5. **परिवहन एवं पर्यटन उद्योग** – त्यौहारों के समय लोग अपने घरों की ओर यात्रा करते हैं या पर्यटन हेतु निकलते हैं, जिससे बस, रेल, विमान सेवाओं तथा होटल एवं पर्यटन उद्योग को विशेष लाभ प्राप्त होता है।
6. **कृषि एवं ग्रामीण उद्योग** – ओणम, बैसाखी, पोंगल जैसे पर्व सीधे कृषि एवं फसलों से जुड़े होते हैं। इन अवसरों पर किसान अपनी उपज बेचकर अधिक आय अर्जित करते हैं।

त्यौहारों के अवसर पर मौसमी रोजगार के अवसरों में भी उल्लेखनीय वृद्धि होती है। दुकानों में अतिरिक्त कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है। मिठाई एवं खाद्य उद्योग में श्रमिकों की आवश्यकता बढ़ जाती है। सजावट, आतिशबाजी, वस्त्र एवं खिलौनों के व्यापार में भी नए रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं। इससे बेरोजगारी में कमी आती है और लोगों की आय में वृद्धि होती है। रामधारी सिंह 'दिनकर' ने भी लिखा है –

"कला, संस्कृति और अर्थव्यवस्था तभी जीवित रहती है, जब जन-जीवन में उत्सव की धड़कन मौजूद हो।"

शहरों में त्यौहारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, परंतु भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ ग्रामीण क्षेत्र है। त्यौहारों के समय गाँवों में उत्पादित वस्तुओं की भी अत्यधिक मांग रहती है जैसे हस्तशिल्प, मिट्टी के बर्तन, दीये, सजावटी सामान आदि। दीवाली पर लाखों दीये गाँव के

कुम्हारों द्वारा बनाए जाते हैं। इस प्रकार ग्रामीण शिल्पकारों और कारीगरों की आजीविका त्यौहारों पर निर्भर करती है।

आज भारतीय त्यौहार केवल भारत तक सीमित नहीं रह गए हैं। प्रवासी भारतीय इन्हें विदेशों में भी धूमधाम से मनाते हैं। अमेरिका, कनाडा, ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, खाड़ी देशों आदि में दीपावली, होली और रक्षाबंधन बड़े स्तर पर मनाए जाते हैं। इससे भारतीय वस्तुओं का निर्यात बढ़ता है जैसे मिठाइयाँ, वस्त्र, सजावटी सामग्री और पूजा-पाठ की वस्तुएँ आदि। इससे विदेशी मुद्रा अर्जित होती है और भारत की अर्थव्यवस्था सुदृढ़ होती है। त्यौहार केवल व्यापारिक दृष्टि से ही महत्वपूर्ण नहीं हैं, बल्कि ये हमें जीवन के मूल्यों की भी याद दिलाते हैं। सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने कहा था –

"भारत का सौंदर्य उसकी विविधता में है और त्यौहार उस विविधता को रंगों से सजाने का माध्यम है।"

स्पष्ट है कि त्यौहार भारतीय संस्कृति की आत्मा हैं। ये न केवल हमें आनंद और उत्साह प्रदान करते हैं, बल्कि हमारी अर्थव्यवस्था को भी नई ऊर्जा और गति प्रदान करते हैं। त्यौहारों से उद्योग-व्यापार, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, रोजगार, पर्यटन, निर्यात सभी क्षेत्रों को लाभ प्राप्त होता है।

पृष्ठ 24 का शेषांश

ई- ऑफिस प्लेटफॉर्म पर भी लागू होगी। इसका अर्थ है कि तमिलनाडु से तमिल में आए पत्र का उत्तर तमिल में ही दिया जाएगा और यही सुविधा अन्य भाषाओं के लिए भी उपलब्ध होगी।

केंद्रीय बजट 2024-25 में इस अनुभाग के लिए 56 करोड़ का प्रावधान किया गया है। यह राशि डिजिटल प्लेटफॉर्म, अनुवाद प्रणाली और भाषाई जागरूकता कार्यक्रमों पर खर्च की जाएगी। इसके अतिरिक्त, सरकार ने भारतीय भाषा पुस्तक योजना की घोषणा की है, जिसके तहत स्कूल और उच्च शिक्षा के लिए भारतीय भाषाओं में डिजिटल पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध कराई जाएंगी।

अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन के अवसर पर माननीय गृह मंत्री श्री अमित शाह जी ने अपने संभाषण में कहा कि हमारी सभी भाषा रूपी नदियां मिलकर भारतीय संस्कृति की गंगा बनती हैं। भारतीय भाषाएं हमारी संस्कृति की आत्मा हैं। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि सभी भाषाओं का विकास एक-दूसरे के बिना संभव नहीं है। यह अनुभाग न केवल भाषाई समानता सुनिश्चित करेगा, बल्कि भारत को उसके चिरंतन गौरवमयी स्थान पर पहुंचाने का मार्ग प्रशस्त करेगा।

प्रभाव और अपेक्षित परिणाम

भारतीय भाषा अनुभाग से निम्नलिखित परिवर्तन अपेक्षित हैं:

- अंग्रेजी निर्भरता में कमी और मातृभाषाओं में शासन की पुनर्स्थापना।
- केंद्र-राज्य संवाद में भाषाई समानता और सम्मान।
- नागरिकों की सीधी भागीदारी और प्रशासनिक पारदर्शिता।
- भाषाई विविधता के संरक्षण और संवर्धन के साथ सांस्कृतिक एकता का सुदृढ़ीकरण।

चुनौतियाँ और समाधान

हालाँकि यह पहल ऐतिहासिक है, लेकिन इसके सामने कुछ चुनौतियाँ भी हैं:

- तकनीकी अनुवाद में सटीकता और भावनात्मक संवेदनशीलता बनाए रखना।
- सभी राज्यों में डिजिटल अवसंरचना का विकास।
- भाषाई राजनीति और मानसिकता में बदलाव।

सरकार ने इन चुनौतियों से निपटने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित अनुवाद उपकरण, भाषाई प्रशिक्षण कार्यक्रम और राज्य सरकारों के साथ साझेदारी की योजना बनाई है। यह अनुभाग केवल एक प्रशासनिक सुधार नहीं, बल्कि उपनिवेशवाद की जंजीरों को तोड़ने वाला सांस्कृतिक संग्राम है। यह पहल अंग्रेजी के प्रभुत्व को समाप्त कर, शासन को जनभाषाओं के स्वाभाविक प्रवाह में ले जाएगी। भारतीय भाषाओं का यह संगम न केवल संवाद को समावेशी बनाएगा, बल्कि भारत की आत्मा को उसकी भाषाओं में बोलने का अधिकार देगा। यह वह क्षण है जब प्रशासनिक शक्ति और सांस्कृतिक चेतना, एक ही स्वर में गूंजती है- **भाषा हमारी पहचान है और पहचान हमारी शक्ति।**

शम्भु कुमार
वरिष्ठ प्रबंधक
अंचल कार्यालय, वाराणसी

काशी से उज्जैन एवं ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग यात्रा
(एक अलौकिक और आध्यात्मिक यात्रा)

शिव की नगरी काशी में कार्यरत कुछ मित्रों ने मिलकर भगवान शिव के अन्य ज्योतिर्लिंगों के दर्शन हेतु एक योजना बनाई। चूँकि हम सभी बिहार के निवासी हैं और पहले भी बैजनाथ धाम के दर्शन कर चुके थे तथा काशी विश्वनाथ के दर्शन का सौभाग्य भी कई बार प्राप्त हो चुका था, अत: सभी ने विचार कर मध्यप्रदेश स्थित दो ज्योतिर्लिंगों के दर्शन का निश्चय किया। इस योजना पर सभी ने सहमति दी क्योंकि एक ही यात्रा में दो ज्योतिर्लिंगों के दर्शन की अभिलाषा पूर्ण हो रही थी।

वाराणसी से उज्जैन जाने के लिए ट्रेन और बस की सीधी सेवाएँ उपलब्ध हैं। निजी वाहन या टैक्सी द्वारा भी सड़क मार्ग से सीधे उज्जैन पहुँचा जा सकता है। हवाई मार्ग से यात्रा के लिए भोपाल या इंदौर के लिए उड़ानें उपलब्ध हैं, जहाँ से ट्रेन, बस या टैक्सी द्वारा उज्जैन पहुँचा जा सकता है। हमने अपनी यात्रा के लिए ट्रेन को चुना, जिसका नाम था महाकाल एक्सप्रेस, जो वाराणसी रेलवे स्टेशन से प्रारंभ होकर लखनऊ, कानपुर, झाँसी, बीना, भोपाल के निकटवर्ती क्षेत्रों से होती हुई प्रात: लगभग 7 बजे महाकाल की नगरी उज्जैन पहुँची।

यात्रा के दौरान खेतों की हरियाली, पुलों से बहती नदियाँ और पहाड़ी दृश्य यात्रा को अत्यंत आनंददायक बना रहे थे। जैसे-जैसे उज्जैन निकट आता गया, मन में महाकाल के दर्शन की भावना तीव्र होती चली गई।

उज्जैन पहुँचने के पश्चात्, स्टेशन से बाहर निकलते ही शहर की धार्मिक गरिमा का अनुभव होने लगा। हम सभी ने सबसे पहले स्टेशन के समीप ही एक होटल में ठहरने का निर्णय लिया। यात्रा की थकान महसूस हो रही थी, अत: रात्रि का भोजन होटल में ही किया। भोजन में मुझे मालवा की प्रसिद्ध मूंगदाल कचौरी एवं खट्टा-मीठा दही परोसा गया, जिसका स्वाद अत्यंत रुचिकर था। भोजन के उपरांत विश्राम किया, ताकि अगली सुबह हम पूर्ण ऊर्जा और श्रद्धा के साथ महाकाल दर्शन हेतु तैयार हो सकें।

भस्म आरती का अलौकिक अनुभव:

अगली सुबह हम सभी रात्रि 2:30 बजे ही जग गए और होटल, में ही स्नान किया क्योंकि हमें महाकालेश्वर मंदिर की प्रसिद्ध भस्म आरती में सम्मिलित होना था। यह आरती प्रात: 4 बजे संपन्न होती है, परंतु इसमें भाग लेने के लिए ऑनलाइन अथवा ऑफलाइन पूर्व-पंजीकरण आवश्यक होता है। पुरुष वर्ग मुख्य रुप से पारंपरिक वस्त्र धोती (बिना सिला हुआ वस्त्र) पहनते हैं। प्रवेश के समय सुरक्षा जांच की जाती है, जिसके पश्चात् मंदिर प्रांगण में प्रवेश की अनुमति प्राप्त होती है।

भस्म आरती का दृश्य अलौकिक था। मंदिर में डमरुओं की गूंज, मंत्रोच्चार की पवित्र ध्वनि और शिवलिंग पर चिता की भस्म से किया गया श्रृंगार, यह सब देखकर मन भीतर तक काँप उठा। यह अनुभव शब्दों में वर्णन करना कठिन है; ऐसा प्रतीत हुआ मानो स्वयं भगवान शिव हमारे समक्ष साक्षात् विराजमान हों।

क्षिप्रा में पवित्र स्नान

आरती के पश्चात् हम सभी क्षिप्रा नदी के रामघाट तट पहुँचे और वहाँ पवित्र स्नान किया। स्नान के समय सूर्य की किरणें जल की सतह पर पड़ रही थीं और घाट पर पुजारियों द्वारा आरती की जा रही थी। यह स्नान केवल शारीरिक नहीं था, बल्कि आत्मिक शुद्धि का अनुभव प्रदान करने वाला था।

उज्जैन के प्रमुख मंदिरों के दर्शन

1. **हरसिद्धि माता मंदिर**

   शक्तिपीठों में गिने जाने वाले इस मंदिर में देवी सती की कोहनी गिरी थी। यहाँ की दीपमालिका (दीप स्तंभ) रात्रि में अत्यंत अद्भुत दृश्य प्रस्तुत करती है। मंदिर की वास्तुकला में गुप्तकालीन शैली की झलक स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

2. **काल भैरव मंदिर**

   मंदिर का प्रवेश द्वार प्राचीन शिल्पकला और लोहे की रचना से सुसज्जित है। इस मंदिर में भगवान काल भैरव को मद्य का भोग अर्पित किया जाता है, जिसे पुजारी स्वयं भगवान को पिलाते हैं। यह परंपरा महाकाल से जुड़ी हुई मानी जाती है।

3. **गढ़कालिका माता मंदिर**

   यह मंदिर काली उपासना का प्रमुख केंद्र है। माता की मूर्ति भव्य एवं उग्र रूप में प्रतिष्ठित है। ऐसी मान्यता है कि महाकवि

कालिदास यहीं से प्रेरणा प्राप्त कर विद्वान बने थे।

4. **चिंतामणि गणेश मंदिर**

यह गणेश जी का अत्यंत प्राचीन मंदिर है, जहाँ भगवान की प्रतिमा स्वयंभू मानी जाती है। ऐसा विश्वास है कि जो भी यहाँ सच्चे मन से प्रार्थना करता है, उसकी समस्त चिंताएँ दूर हो जाती हैं।

5. **संदीपनि आश्रम**

यह वह पवित्र स्थल है जहाँ भगवान श्रीकृष्ण, बलराम और सुदामा ने शिक्षा प्राप्त की थी। आश्रम परिसर में पुरातात्विक अवशेष, यज्ञशाला और गौशाला भी दर्शनीय हैं।

6. **शनि मंदिर**

यह भारत के प्रमुख शनि मंदिरों में से एक है, जहाँ नवग्रह पूजन का विशेष महत्व है। विशेष रूप से शनिवार के दिन यहाँ श्रद्धालुओं की अत्यधिक भीड़ होती है।

स्थानीय व्यंजन और स्वाद

दिनभर भ्रमण के दौरान हमने स्थानीय व्यंजनों का भरपूर आनंद लिया। नाश्ते में गरमागरम पोहा-जलेबी जिसे ऊपर से भुजिया और नींबू डालकर परोसा गया। दोपहर के भोजन में दाल बाफले, सेव-टमाटर की सब्जी, छाछ और मीठे में मावा बाटी का स्वाद लिया। शाम को हल्की भूख में मूंगदाल स्टफ्ड कचौरी और कटिंग चाय का आनंद लिया।

मालवा की रसोई में देशी घी, मसालों और स्थानीय सामग्री की भरपूर झलक देखने को मिली, जिसने भोजन के स्वाद और भारतीय संस्कृति दोनों से हमारा परिचय कराया।

यात्रा के साधन और निकटतम स्थानों की जानकारी:

- **रेलवे स्टेशन:** उज्जैन जंक्शन का भारत के अधिकांश प्रमुख शहरों से सीधा रेल संपर्क उपलब्ध है।
- **बस स्टैंड:** नानाखेड़ा बस स्टैंड-इंदौर, भोपाल, देवास, खंडवा, रतलाम आदि शहरों से सीधी बस सेवाएँ उपलब्ध हैं।
- **निकटतम हवाई अड्डा:** इंदौर (देवी अहिल्याबाई होलकर अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डा)- यह उज्जैन से लगभग 55 किलोमीटर दूर स्थित है। यहाँ से टैक्सी अथवा बस द्वारा आसानी से पहुँचा जा सकता है।

दूसरा चरण - ओंकारेश्वर यात्रा

उज्जैन दर्शन के पश्चात् हमने खंडवा जिले में स्थित ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग की यात्रा की। उज्जैन से ट्रेन या टैक्सी के माध्यम से इंदौर होते हुए ओंकारेश्वर पहुँचा जा सकता है। वहाँ पहुँचते ही नर्मदा नदी के दोनों किनारों पर स्थित मंदिरों और ओंकाराकार टापू के दर्शन हुए।

ओंकारेश्वर मंदिर की विशेषताएँ:

- ओंकारेश्वर मंदिर नर्मदा नदी के टापू पर स्थित है।
- यहाँ एक ओर ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिंग है और दूसरी ओर ममलेश्वर मंदिर - दोनों का दर्शन करना आवश्यक माना जाता है।
- मंदिर की वास्तुकला नागर शैली की है, जिसमें ऊँचे शिखर और नक्काशीदार खंभे हैं।
- नर्मदा परिक्रमा पथ पर चलना एक आत्मिक अनुभव प्रदान करता है।

ओंकारेश्वर में दर्शनीय स्थलों की एक अनोखी शृंखला है,जो श्रद्धा और शिल्पकला का अद्भुत संगम प्रस्तुत करती है। यहाँ स्थित गोमुख गुफा अपनी रहस्यमय शांति से मन को भीतर तक छू जाती है। सिद्धनाथ मंदिर, प्राचीन शिल्पकला का एक अनुपम उदाहरण है, जिसकी दीवारों पर उकेरी गई नक्काशी इतिहास की गहराइयों में ले जाती है। वहीं नर्मदा घाट पर संध्या समय की आरती के दीपों की झिलमिलाहट, मंत्रों की गूंज और नर्मदा की लहरों के संगीत से मिलकर एक आत्मिक वातावरण रचती है।

ओंकारेश्वर में मुझे भुट्टे की कीस नामक एक स्थानीय व्यंजन का स्वाद लेने का अवसर मिला। यह घिसे हुए भुट्टे से बना एक हल्का-फुल्का व्यंजन है, जो तीखा और अत्यंत स्वादिष्ट होता है। वहाँ के बाजारों में मालवा शैली के और भी कई पारंपरिक व्यंजन उपलब्ध थे।

इस प्रकार मेरी यह यात्रा, जो काशी से प्रारंभ हुई थी, उज्जैन और ओंकारेश्वर की दिव्यता से होते हुए आत्मा को परम शांति प्रदान कर गई। यह अनुभव शब्दों से परे है, जिसे केवल वहाँ जाकर ही अनुभव किया जा सकता है।

''जिस देश को अपनी भाषा और साहित्य के गौरव का अनुभव नहीं है, वह उन्नत नहीं हो सकता''

-डॉ. राजेंद्र प्रसाद

डॉ. सोमा वंद्योपाध्याय
कुलपति
बीएसएईयू, कोलकाता

एक मुलाकात

महोदया की कविता सुनने के लिए
क्लिक करें

भारतीय संस्कृति की गहराइयों में रची-बसी, साहित्य की सरिता में अवगाहन करती और सेवा की भावना से ओतप्रोत एक अद्वितीय नाम - **डॉ. सोमा वंद्योपाध्याय**। बहुआयामी व्यक्तित्व की धनी परंतु आभा में विनम्रता प्रतिमूर्ति, काव्य की वीणा पर वे ऐसे सुर साधती हैं, जो हृदय को स्पर्श करते हुए आत्मा को आलोकित करती हैं। हिंदी के साथ उर्दू, बांग्ला, मिज़ो, डोगरी, ओड़िया और पंजाबी जैसी भाषाओं की बहुभाषी साधना ने उनकी लेखनी, नेतृत्व और अनुवाद-कला को राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय मंचों पर विशिष्ट पहचान दिलाई है। वर्तमान में वे बाबा साहेब अंबेडकर शिक्षा विश्वविद्यालय, कोलकाता की कुलपति हैं, जहाँ वे शिक्षा को समाज के पुनर्निर्माण का माध्यम बना रही हैं। साहित्य अकादमी अनुवाद पुरस्कार, मीरा स्मृति सम्मान, प्रयाग साहित्य सम्मेलन सम्मान, राजभाषा गौरव सम्मान, भारत गौरव सम्मान, बी.आर. अंबेडकर सम्मान, यशस्विनी पुरस्कार, एकालेर द्रोणाचार्य सम्मान, कल्याणमल लोढ़ा शिक्षक सम्मान सहित अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित महान व्यक्तित्व से यह साक्षात्कार एक अमूल्य अनुभव है। सुधीजनों के समक्ष प्रस्तुत है, एक बौद्धिक और महत्त्वपूर्ण साक्षात्कार के अंश....

1. सर्वप्रथम आप अपने जन्मस्थान आरंभिक शिक्षा-दीक्षा और कैरियर के संबंध में बताएं।

मेरे जीवन की शुरुआत भारत की सांस्कृतिक राजधानी कोलकाता की साहित्यिक गलियों से हुई, जहाँ हर मोड़ पर इतिहास की गूंज और आधुनिकता की झलक मिलती है। वहाँ की हवाओं में रवींद्र संगीत की मधुरता और बंकिम की विचारधारा की गरिमा समाई हुई थी। मेरी शिक्षा का प्रथम दीप शांतिनिकेतन में प्रज्वलित हुआ, जहाँ मेरे दादा जी ने मुझे मेरी मातृभाषा बांग्ला से परिचय कराया।

मेरे पिता, जो बार्डर रोड ऑर्गेनाइजेशन में अभियंता थे, उनके साथ जीवन की यात्रा ने मुझे जम्मू पहुँचाया। वहाँ के स्थानीय विद्यालय में मैंने डोगरी भाषा सीखी और केंद्रीय विद्यालय में एक वर्ष तक अध्ययन किया। इसके बाद कश्मीर की वादियों में मेरी चौथी और पाँचवीं कक्षा की पढ़ाई हुई, जहाँ मैंने उर्दू भाषा को आत्मसात किया। फिर जीवन ने करवट ली और हम पहुँचे मिजोरम, जहाँ मैंने सेंट पॉल उच्च विद्यालय में अध्ययन किया और मिज़ो भाषा में शिक्षा प्राप्त की। वहाँ मैंने आईसीएसई बोर्ड में चतुर्थ स्थान प्राप्त किया। इसके बाद पुन: पश्चिम बंगाल लौटकर मैंने उच्च माध्यमिक की शिक्षा पूरी की, जिसमें बांग्ला मेरी विषय भाषा रही। बचपन से ही मेरी कहानियाँ और कविताएँ विद्यालय की पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। मेरे पिता की प्रेरणा से मैंने सेठ आनंदराम जयपुरिया महाविद्यालय से हिंदी में स्नातक किया और फिर कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की। तत्पश्चात नेट, सेट तथा पीएचडी किया। लगभग 22 वर्ष की आयु में मुझे श्रीशिक्षायतन महाविद्यालय में अध्यापन का अवसर मिला। इसके बाद कलकत्ता महाविद्यालय में कार्य करते हुए मैं वहाँ की 169 वर्षों की परंपरा में पहली महिला रजिस्ट्रार बनी, फिर कलकत्ता विश्वविद्यालय के महिला अध्ययन केंद्र की निदेशक बनी और आगे चलकर आईआईडब्ल्यूएसबीएम की निदेशक के रूप में कार्य किया। मेरी यात्रा यहीं नहीं रुकी। मुझे बीएसईएयू का कुलपति नियुक्त किया गया, जहाँ मैं विगत 8 वर्षों से सेवा दे रही हूँ। इस दौरान मुझे दो अन्य विश्वविद्यालयों यथा संस्कृत विश्वविद्यालय का 2.5 वर्षों तक अतिरिक्त कार्यभार और डायमंड हार्बर महिला विश्वविद्यालय का दायित्व भी सौंपा गया।

2. महोदया, आप विश्वविद्यालय की जिम्मेदारियों, सृजनात्मक लेखन और पारिवारिक दायित्वों के बीच अद्भुत संतुलन कैसे स्थापित करती हैं ? तीनों क्षेत्रों में आपकी दक्षता प्रेरणादायक है, इसका मूल-मंत्र क्या है ?

मुझे इन कार्यों हेतु ऊर्जा और प्रेरणा धरती माँ से मिलती है। वह मिट्टी जो जीवनदायिनी और धैर्य की ऐसी मिसाल है, सबका भार सहती है, अन्न, जल, आश्रय और हरियाली देती है। हम उस पर अत्याचार करते हैं, फिर भी वह मौन रहती है। लेकिन जब सीमा पार होती है, तब वह बाढ़, भूकंप और तूफान बनकर चेताती है। उसी धरती से नारी ने संतुलन का पाठ सीखा है। वह बेटी, पत्नी, माँ बनकर घर और बाहर दोनों को सँभालती है। उसकी दिनचर्या में अनुशासन है और सोच में करुणा। वह सवेरे उठकर घर को दिशा देती है, भोजन बनाती है, काम पर जाती है, बच्चों की चिंता करती है और फिर उसी ऊर्जा से घर लौटती है। यह संतुलन, यह सहनशीलता, यह शक्ति ही नारी की प्रकृति है। वह

सृजन करती है, सहती है, सँभालती है और फिर भी मुस्कुराकर आगे बढ़ती है। मेरा मानना है कि हमारी स्त्रियों में प्रकृतिदत्त गुण है वह संतुलन जानती है। यह सब कुछ एक ही स्त्री ही कर सकती है। इसी तरह मैं भी कर लेती हूँ।

3. आप एक संवेदनशील कवयित्री हैं। व्यस्त जीवन की आपाधापी में कविता आपको ऊर्जा और जीने का संबल देती है। ऐसे में आपके प्रिय कवि और लेखक कौन हैं, जिनसे आप सबसे अधिक प्रेरणा पाती हैं?

भाषाओं की विविधता ने मेरे साहित्यिक संसार को विस्तार दिया। पिता की आर्मी सेवा के कारण देश के कोने-कोने में घूमने, अलग-अलग क्षेत्रीय भाषाओं, संस्कृतियों और विद्यालयों से जुड़ने का अवसर मिला। कभी डोगरी, कभी उर्दू, कभी मिजो, हर बार एक नई भाषा, एक नया विद्यालय और एक नई चुनौती। उस संघर्ष ने मुझे भाषाओं से परिचय कराया और साहित्य की गहराइयों में उतरने का अवसर दिया। बांग्ला में ताराशंकर बंद्योपाध्याय और सुनील गंगोपाध्याय, हिंदी में रेणु, निराला, मुक्तिबोध, अज्ञेय, अंग्रेजी में हार्डी और शेक्सपियर, मलयालम में शिवशंकर पिल्लै आदि। इन सभी की रचनाओं ने मेरे विचारों को गढ़ा, मेरी दृष्टि को संवारा। साहित्य मेरे लिए केवल शब्दों का संसार नहीं, बल्कि जीवन को देखने का एक दृष्टिकोण है, जो हर भाषा में एक नया रंग, एक नया अनुभव लेकर आता है।

4. हिंदी विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा पाठ्यक्रमों की रूपरेखा निर्माण में आपकी महती भूमिका रही है। भविष्य में किन नए पाठ्यक्रमों की योजना है?

जब से मैंने अकादमिक जगत में कदम रखा है, तभी से मेरा विश्वास रहा है कि शिक्षा केवल ज्ञान का संचय नहीं, बल्कि जीवन का सशक्त साधन है। इसलिए मैं सदैव इस बात पर बल देती हूँ कि शिक्षा के साथ कौशल का संगम हो तथा इसका अधिकाधिक प्रचार-प्रसार हो ताकि ज्ञान केवल पुस्तकों तक सीमित न रहे, बल्कि हाथों के हुनर और विचारों की उड़ान से युवा पीढ़ी को आत्मनिर्भरता का आकाश मिले। ज्ञान दीपक है, पर कौशल उसकी लौ; दोनों के संग से ही भविष्य उज्ज्वल बनता है।

5. आजकल के साहित्य में फैशनेबल लेखन हावी हो गया है, जहाँ जमीनी सरोकारों की कमी है और रचनाएँ केवल प्रकाशन योग्य सामग्री बनकर रह गई हैं। क्या आप इसे साहित्य का विघटन मानती हैं? आपके अनुसार इसके पीछे प्रमुख कारण क्या है?

सोशल मीडिया, सिनेमा और नवप्रवृतियों के इर्द-गिर्द घूमता हुआ आज का लेखन फैशनेबल हो गया है। साहित्य केवल मनोरंजन नहीं, समाज का दर्पण है तथा मूल्यबोध का वाहक है। वास्तविक साहित्य वह है जो जीवन को जिए, न कि केवल कल्पना में बुने। पहले के आंचलिक उपन्यासों में गाँव की मिट्टी की सोंधी महक, खेतों की हरियाली तथा तालाबों की शांति थी। प्रेमचंद्र, रेणु, नागार्जुन जैसे लेखक उस यथार्थ को जीते थे, तभी उसे लिख पाए। आज जब लेखन कार्य वातानुकूलित घर के भीतर होता है, तो जमीन, जंगल और प्रकृति का स्वर उसमें विलुप्त हो जाता है। गाँव बदल रहा है, तकनीक पहुँच रही है, लेकिन साहित्य पूर्ववत नहीं दिखता। साहित्य को फिर से जीवन से जोड़ना होगा, तभी वह दिशा देगा, दृष्टि देगा।

6. बांग्ला और हिंदी साहित्य में आप सामाजिक मुद्दों की प्रस्तुति और पाठकों से जुड़ाव के संदर्भ में क्या अंतर महसूस करती हैं? आपने बांग्ला साहित्य का गहन अध्ययन किया है इससे मिले संदेशों ने आपके लेखन को कैसे प्रभावित किया और आपके नए प्रयास क्या हैं?

बांग्ला और हिंदी साहित्य दोनों ही समृद्ध हैं, लेकिन उनके स्वभाव में अंतर है। बांग्ला साहित्य भावनाओं की गहराई और सांस्कृतिक चेतना से परिपूर्ण है, जबकि हिंदी साहित्य ने विविध भाषाओं से ग्रहण कर एक महासंगम रचाया है। हिंदी मेरी धात्रिभाषा है, जिसने मुझे पाल-पोसकर साहित्य की व्यापक दृष्टि दी। बांग्ला मेरी मातृभाषा है, जिसकी जड़ों में परंपरा और आत्मा की गहराई है। 'उपन्यास' शब्द से लेकर विद्यासागर द्वारा बेताल पचीसी के अनुवाद तक बांग्ला और हिंदी दोनों ने एक-दूसरे को बहुत कुछ दिया है। आज भी बांग्ला अखबारों में हिंदी शब्द सहज रूप से घुल-मिल गए हैं। मैंने इसी भाषिक संगम को 'चतुर्भाषी अभिधान' के रूप में उर्दू, बांग्ला, हिंदी और अंग्रेजी को एक साथ लाकर शब्दकोश के रुप में संकलित किया है। बांग्ला साहित्य हमें आत्मचिंतन, सामाजिक चेतना और मानवीय मूल्यों का संदेश देता है। भाषा को जोड़ने का माध्यम बनाना, साहित्य को मूल्यबोध से भरना और पाठकों के हृदय तक पहुँचाना ही मेरा प्रयास है। मैं कहानियों, कविताओं में युगीन यथार्थ को लिखने का प्रयास करती हूँ। साहित्य हमें यह संदेश देती है कि जितना भी अंधेरा छा जाए सवेरा तो होगा ही।

7. शिक्षा और प्रशासनिक व्यस्तताओं के बीच, एक भारतीय स्त्री जो घर, साहित्य और नौकरी में खुद को समर्पित करती है। क्या आपने कभी महसूस किया कि इस प्रक्रिया में आपका अस्तित्व कहीं विलीन हो जाता है?

नहीं, मैंने कभी अपने अस्तित्व को खोने का अनुभव नहीं किया। यदि मैं केवल घर तक सीमित रहती, तो शायद मेरा वजूद किसी कोने में दब जाता, लेकिन जिस पद पर मैं हूँ, वह मुझे हर दिन यह एहसास दिलाता है कि मेरा होना अर्थपूर्ण है। दिन भर की व्यस्तताओं के बाद जब कार्यों की संतुष्टि मिलती है, तो वही ऊर्जा बनकर मुझे घर की जिम्मेदारियाँ सँभालने की शक्ति देती है। मेरे लिए कार्य केवल दायित्व नहीं, आत्म-प्रकाश है। मैं जहाँ भी रहीं - संस्थान, साहित्य या परिवार- हर जगह मैंने स्वयं को समर्पित किया और हर भूमिका ने मुझे नया विस्तार दिया है। मैं विलीन नहीं होती, मैं विकसित होती हूँ। मेरा अस्तित्व मेरे कर्मों में है और वही मुझे पूर्णता का अनुभव कराता है।

8. क्या कभी ऐसा समय आया जब आपने लिखना छोड़ देने का विचार किया ? उस दौर से बाहर निकलकर आपने फिर से कलम कैसे थामी ?

मैंने लिखना कभी नहीं छोड़ा, न ही कठिन समय में, न ही थकान के क्षणों में। मेरे लिए लेखन केवल अभिव्यक्ति नहीं, आत्मिक संबल है। जब जीवन सबसे अधिक चुनौतीपूर्ण होता है, तब मेरी कलम सबसे अधिक सक्रिय होती है। उसी कठिन दौर में लिखी गई रचना बाद में सम्मानित हुई, यह इस बात का प्रमाण है कि भावना से उपजा साहित्य ही सर्वाधिक आत्मीय होता है।

जब मन बोझिल होता है, तब शब्द मेरे सहचर बन जाते हैं। वे मुझे थामते हैं, सँभालते हैं और फिर से खड़ा करते हैं। मेरे लेखन की ऊर्जा मेरे भीतर के संवेग से आती है और वही पाठकों के हृदय तक पहुँचती है। मैं लिखती हूँ क्योंकि मेरे भीतर कुछ ऐसा है जो कहे बिना नहीं रह सकता।

9. आपके जीवन में ऐसा कौन-सा लेखक या कविता है, जो हर बार पढ़ने पर नई ऊर्जा देता है ?

जीवन की राहों में जब भी धुंध छा जाती है, जब आत्मा थकने लगती है और संकल्प डगमगाने लगता है, तब रवींद्रनाथ टैगोर की कविता 'एकला चलो रे' मेरे भीतर एक दीपशिखा की तरह जल उठती है। यह कविता मुझे सिखाती है कि यदि कोई साथ न दे, तो अकेले चलने का साहस करो, क्योंकि आत्मबल ही सबसे बड़ा संगी है। इसी तरह स्वामी विवेकानंद के शब्द 'अगर तुम्हारे रास्ते में अड़चनें नहीं आतीं, तो समझो तुम गलत दिशा में हो'। उनका यह विचार कि जीवन की रेखा सरल नहीं होती, बल्कि संघर्षों की लहरों से ही ऊँचाईयाँ मिलती हैं, मेरे लिए प्रेरणा का स्रोत है। हर बार इन विचारों को पढ़ना ऐसा लगता है जैसे आत्मा को फिर से ऊर्जा मिल गई हो, जैसे थकी हुई चेतना को किसी पर्वत की चोटी से पुकार मिल रही हो।

10. सोशल मीडिया एक तरफ मंच है, तो दूसरी ओर हमला- आप इसे साहित्य के लिए अवसर मानती हैं या खतरा ?

सोशल मीडिया एक दोधारी तलवार है। एक ओर यह मंच है, जहाँ साहित्य को व्यापक पहुँच मिलती है, तो दूसरी ओर यह एक ऐसा माध्यम भी बन जाता है, जहाँ संवेदनाओं पर आघात होता है। यह संवाद का सेतु भी है और कभी-कभी असहमति का शोर भी। साहित्य के लिए यह अवसर है, यदि इसका उपयोग संतुलन और विवेक के साथ किया जाए। लेकिन जब इसका प्रयोग समाज में भ्रम, विघटन और अफरातफरी फैलाने के लिए होता है, तब यह खतरा बन जाता है। लेखकों और पाठकों दोनों को यह समझना होगा कि डिजिटल मंच पर शब्दों की जिम्मेदारी और गरिमा बनी रहनी चाहिए। सोशल मीडिया की शक्ति को दिशा देना आवश्यक है, ताकि वह साहित्य को जोड़ने वाला माध्यम बने, तोड़ने वाला नहीं। जब यह मंच विचारों के आदान-प्रदान, संवेदना की साझेदारी और सृजन की प्रेरणा बनता है, तभी यह साहित्य के लिए वरदान सिद्ध होता है।

11. जब लेखन सिर्फ दिखावे के लिए किया जाए, तो क्या उसमें संवेदना बचती है ? आपको क्या लगता है- आज का साहित्य 'भावना' से लिखा जा रहा है या 'बाजार' से ?

जब लेखन केवल दिखावे के लिए किया जाए, तो उसमें संवेदना की आत्मा खो जाती है। साहित्य की शक्ति उसकी गहराई में है, न कि उसकी चमक में। आज का लेखन अक्सर बाजार की माँग पर केंद्रित हो गया है, जहाँ भावनाओं की जगह प्रस्तुति ने ले ली है। स्थायित्व उन्हीं रचनाओं को मिलता है जिनमें मूल्यबोध और मानवीय संवेदना होती है। मैक्सिम गोर्की, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, इस्मत चुगताई, शरतचंद्र, यशपाल जैसे लेखक इसलिए आज भी जीवित हैं, क्योंकि उन्होंने समय को महसूस किया, समाज की पीड़ा को जिया और उसे अपनी लेखनी में ढाला। उनकी रचनाएँ केवल दृश्य नहीं थीं, वे दृष्टि थीं, जो पाठकों के भीतर उतरती हैं। आज के लेखन में वह गहराई कम दिखती है। जब लेखक स्वयं भीतर से नहीं लिखता, तो पाठक के हृदय तक नहीं पहुँच पाता है। साहित्य का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि मनुष्य को दिशा देना है और दिशा वही दे सकता है जिसमें मूल्य हो, संवेदना हो और भविष्य की दृष्टि हो। साहित्य तब तक जीवित रहता है जब उसमें भीतर की सच्चाई हो, बाजार की चमक नहीं। जो लेखन केवल दिखाने के लिए होता है, वह संवेदना खो बैठता है। स्थायित्व उन्हीं रचनाओं को मिलता है जो पाठक के हृदय को छूती हैं और समाज को दिशा देती हैं।

12. आपके लिए लेखन पहले एक 'मुद्दा' होता है या एक 'भावना'? लिखने की शुरुआत विचार से होती है या किसी दृश्य से?

मेरे लिए कहानी केवल एक विचार या भावना नहीं, बल्कि दोनों का समवेत स्वर है। वह एक ऐसा बीज है जिसमें संवेदना की जड़ें होती हैं और मुद्दों की शाखाएँ फैलती हैं। विचार और संवेदना जब एक साथ बहते हैं, तभी साहित्य में जीवन उतरता है। लेखन की शुरुआत कभी किसी दृश्य से होती है, कभी किसी विचार से, परंतु अंततः वह मेरे भीतर के संवेग और आवेग की अभिव्यक्ति होती है। मैं किसी मंच या प्रकाशन के लिए नहीं लिखती, बल्कि अपने भीतर की भावनाओं को व्यक्त करने के लिए लिखती हूँ। मेरी भावना जब शब्दों में ढलती है, तो पाठक उसे अपने भीतर महसूस करते हैं। यही साहित्य की शक्ति है- जो भीतर से निकले और भीतर तक पहुँचे।

मेरी कहानी 'रेस का घोड़ा' इसका उदाहरण है- जहाँ पिता अपने बच्चों को सफलता की दौड़ में रेस का घोड़ा बना देते हैं, लेकिन वही घोड़ा उनके जीवन का बोझ नहीं उठा सकता। यह एक गहरी सामाजिक सच्चाई है। बच्चे वही सीखते हैं जो वे देखते हैं- इसलिए लेखन में विचार और दृष्टि का होना अनिवार्य है।

13. क्या आपके पास कोई अधूरी पांडुलिपि है जो आपके दिल के बेहद करीब है?

जी हाँ, एक ऐसी रचना जो मेरे हृदय की गहराइयों में धड़कती है, जैसे कोई पुराना गीत जो समय के साथ और भी मधुर हो गया हो। यह पांडुलिपि केवल शब्दों का संग्रह नहीं, बल्कि मेरे जीवन की धड़कनों, अनुभवों और उन अनकहे क्षणों की गवाही है जो अब तक कागज पर उतरने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

14. आप जब थकती हैं- शब्दों से, जिम्मेदारियों से, रिश्तों से-तब आप किन पन्नों में छुप जाती हैं?

मेरे पास कल्पना का एक विराट संसार है, जहाँ विचार बहते हैं, भावनाएँ खिलती हैं और संवेदनाएँ साँस लेती हैं। वहाँ कोई शोर नहीं होता, केवल मौन होता है- जो कहता है, सुनता है और सहेजता है। वही मेरा आश्रय है, मेरी शरणस्थली। वहाँ मैं डुबकियाँ लगाती हूँ, कभी किसी अधूरे पात्र के साथ, कभी किसी अधूरे संवाद के साथ। वहाँ मैं स्वयं को फिर से पाती हूँ, शब्दों को फिर से जीती हूँ। मेरे लिए लेखन केवल अभिव्यक्ति नहीं, आत्मिक विश्राम भी है।

15. आपने विभिन्न संस्थानों का नेतृत्व किया है, चाहे वे प्रबंधन से संबंधित हों, संस्कृत भाषा से या प्रशिक्षण से। विभिन्न संस्थाओं की कार्यप्रणाली भिन्न-भिन्न होती है; ऐसे में आप कैसे सफल हो पाती हैं?

नेतृत्व मेरे लिए पद नहीं, एक सतत सीखने की प्रक्रिया है। ईश्वर ने मुझे संस्कृत विश्वविद्यालय से लेकर महिला महाविद्यालय, शिक्षण-प्रशिक्षण संस्थानों और प्रबंधन संस्थाओं तक विविध अवसर दिए। हर संस्था की कार्यप्रणाली भिन्न थी, लेकिन मेरा दृष्टिकोण एक था- सीखना और आत्मसात करना। जब मैं कलकत्ता विश्वविद्यालय की रजिस्ट्रार नियुक्त हुई, तब मैंने सर आशुतोष मुखर्जी और डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के कार्यकाल के ऐतिहासिक प्रस्तावों और संकल्पों का अध्ययन किया। प्रबंधन में आई तो रातों-रात संगठन-व्यवहार, समूह प्रबंधन, ग्राहक संव्यवहार (क्लाइंट डीलिंग) जैसे विषयों को आत्मसात किया। साहित्यिक मन होने के कारण मैं केवल नियमों से नहीं, हृदय से भी सोचती हूँ। मेरा विश्वास है कि भाषा व्यक्ति को शक्तिशाली बनाती है- जितनी भाषाएँ, उतनी दृष्टियाँ। मैंने यूजीसी, एनसीटीई, एआईसीटीई जैसी नियामक संस्थाओं के नियमों को समझकर कार्य किया। नेतृत्व में सफलता तभी आती है जब आप स्वयं के प्रति ईमानदार हों। किसी का आकलन करने से पहले यह सोचें कि उनकी जगह आप होते तो क्या करते। टीम का अर्थ है - Together Everyone Achieves More। जब हम साथ आते हैं, तो कार्य की गुणवत्ता और आत्मीयता दोनों बढ़ती है। पढ़ाई आपको धार देती है, लेकिन संस्कार आपको गहराई देते हैं और अंततः आपकी भीतर की अच्छाई ही आपके चेहरे पर चमकती है जो लोगों को प्रभावित करती है।

16. नवोदित लेखकों को आप क्या संदेश देना चाहेंगी?

नवोदित लेखकों से मैं यही कहना चाहूँगी कि लेखन की शुरुआत बाहर से नहीं, भीतर से होनी चाहिए। जो आप महसूस करते हैं, वही लिखें- क्योंकि सच्चा साहित्य वही होता है जो आत्मा से उपजता है, न कि केवल आँखों से देखा जाता है। किसी घटना को केवल देखना पर्याप्त नहीं, उसे भीतर जीना जरूरी है। जब आप किसी अनुभव को अपने भीतर महसूस करते हैं, तभी वह शब्दों में सजीव होकर पाठकों के मन तक पहुँचता है। लेखन में सबसे जरूरी है स्व-सहमति, तभी वे दूसरों को प्रभावित कर सकते हैं। दूसरों की नजरों से नहीं, अपनी दृष्टि से लिखें। साहित्य कोई प्रतियोगिता नहीं, यह आत्म-अन्वेषण की यात्रा है और इस यात्रा में सबसे बड़ा साथी आपका अंतःकरण होता है।

कविताएँ

भाषायी एकता

विनीत कुमार
मुख्य प्रबंधक
जोखिम प्रबंधन विभाग, प्रधान कार्यालय

भाषा की बगिया में देखो कितने फूल अनेक,
सब फूलों में खुशबू, रंग, रूप अनेक,
पर इन फूलों को जब गया पिरोया,
तो बन गई सुंदर सी माला एक।

जब बहन कहे भाई या दादा,
या कहे अन्ना और वीरा,
भाषाएँ हैं ये सभी अनेक,
पर सब में मिलता प्रेम-भाव एक।

कहे किसान नमस्कार या आदाब,
वणक्कम या सत श्री अकाल,
अनाज उगाए कृषक अनेक,
पर जब भूख मिटे तब तृप्ति हो एक।

कोई माने अपना, कोई पराया,
किसी ने बिहू में लोहड़ी का रंग पाया,
तो कोई देख उर्दू कहता पराया,
पर कब खुद से जुदा हुआ है हमसाया।
बांटने से कहाँ बटते हैं नदियाँ और झरने,
सब दरिया का पानी जा सागर में समाया,
मिल कर कावेरी ने सतलुज से,
उत्तर दक्षिण का भेद मिटाया।

मां बोली में ममता पाई, दूजी में प्रीत,
तीसरी में नौकरी मिली, चौथी के गाए गीत,
पर ना द्वेष की भावना, ना कोई समझी पराई
बोली सदा वही बोली जो सब के मन को भायी।

उड़ान

उषा कुमारी
सहायक प्रबंधक

तुमने कहा...

चलो ना उड़ते हैं, हर बंधन तोड़ कर,
उड़ चलते हैं असीम अपरिमित आसमानों में।
बंदिशें तोड़ देते हैं इन दीवारों की,
उड़ने दो अब इन परों को,
ना बाँधो इन राहों को।

मैंने सुनी...

तुम्हारी इक-एक अनकही,
और देखो आज हूँ उस उड़ान पर,
जहाँ चाँद को छू लूं,
सूरज से लड़ जाऊं,
अपने सपनों के संग उड़ जाऊं।
माँ भी हूँ, भक्ति भी हूँ,
शक्ति भी हूँ, तरक्की भी हूँ,
झुकी नहीं हूँ जमाने से, बेबस नहीं हूँ।

इन अनजानी राहों से...

अधरों में जलती लौ, न बुझती कभी
न थकती हूँ...
और देखो, चल पड़ी हूँ बदलने दुनिया
की नजर।

ए मेरी बिटिया सदैव बनी रहे तेरी मुस्कान......

मोरेश्वर खापेकर
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)
अंचल कार्यालय, मुंबई

आई जब इस धरती पर बना दिया तुमने मुझे संपूर्ण,
तेरे दर्शन मात्र से दादा-दादी नाना-नानी सभी हो गए प्रसन्न।
माता पिता और भाई के लिए तुम परी से नहीं हो कम,
तेरी सरल सलोनी दिव्य आभा से घर हो गया मंदिर का प्रांगण।
जब भी तू खिलखिलाती है,सौ टॉनिक का बल साथ लाती है,
तेरी हर मुस्कान में पायल की छनछन,अनहद का नाद और मुरली की तान।

ए मेरी बिटिया सदैव बनी रहे तेरी मुस्कान........................

माना की यह पूर्ण ब्रह्म का दरबार है, हर स्वभाव के व्यक्तियों से भरा हुआ संसार है,
पर यूँ ही नहीं कहा जाता है कि नारी तू नारायणी, इसे समझेगी तू अवश्य, जब होगी सयानी।
बनो आत्मनिर्भर पर मत रखना अभिमान, करना सबसे समान व्यवहार, देना सभी को यथोचित सम्मान,
चाहे जैसी भी स्थिति हो संभाल के रखना अपनी मुस्कान, यही करेगी तेरी रक्षा यही दिलाएगी तुझे सम्मान।

ए मेरी बिटिया सदैव बनी रहे तेरी मुस्कान........................

भले-बुरे की होगी पहचान, रखना सदैव अपना आत्म-सम्मान,
शिक्षा, नौकरी, गृहस्थी और सामाजिक सरोकार के संसार में, सदैव रहना सम्यक्, न हो दोलायमान।
प्रीत में हो समर्पण, रहे एक दूजे के स्वाधीन, हो साथ एक दूसरे का, पर मत रहना पराधीन,
बना लो अपनी विशेष पहचान, बना रहे तेरा प्रतिपल सम्मान।

ए मेरी बिटिया सदैव बनी रहे तेरी मुस्कान........................

ट्यूजडेज़ विद मॉरी

दीपिका सोनी
वरिष्ठ प्रबंधक
एसएमई एवं कृषि प्र., अजमेर अंचल

'मिच एल्बॉम' एक प्रतिष्ठित अमेरिकी लेखक हैं, जो खेल, पत्रकारिता और परोपकारी कार्यों में भी सक्रिय हैं। वे स्वभावत: आत्म-सहायता और नॉन-फिक्शन विधा में लेखन करते हैं। यद्यपि उन्होंने कई पुस्तकें रची हैं परंतु 'ट्यूजडेज़ विद मॉरी' उनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध और व्यापक रूप से पढ़ी जाने वाली कृति है, जो पाठकों के हृदय को गहराई से स्पर्श करती है।

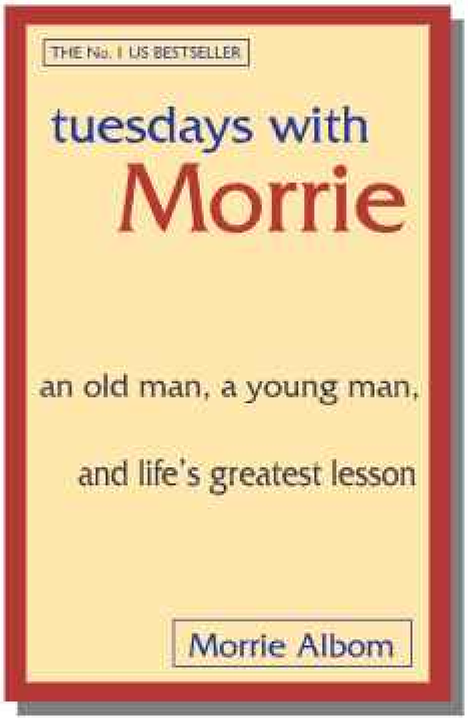

यह पुस्तक एक सत्य कथा पर आधारित है, जिसमें लेखक अपने कॉलेज के प्रिय प्राध्यापक मॉरी से मिलते हैं, जो उस समय एक घातक और असाध्य बीमारी से ग्रस्त होते हैं। यह भावपूर्ण मुलाकातें जीवन, मृत्यु और संबंधों की गहराइयों को उजागर करती हैं, जो पाठकों को आत्मचिंतन और संवेदनशीलता की ओर प्रेरित करती हैं।

ट्यूजडेज़ विद मॉरी का विस्तृत शीर्षक है — एक वृद्ध व्यक्ति, एक युवा शिष्य और जीवन के बहुमूल्य पाठों की कहानी। यह कथा उस क्षण से आरंभ होती है जब लेखक, मिच एल्बॉम वर्षों बाद अपने कॉलेज के आदरणीय प्राध्यापक मॉरी से पुन: मिलते हैं। प्राध्यापक उस समय जीवन की अंतिम अवस्था में एक असाध्य रोग से जूझ रहे होते हैं। यह पुस्तक उन मार्मिक मंगलवारों की शृंखला है, जहाँ जीवन के गहनतम सत्य-प्रेम, मृत्यु, क्षमा, उद्देश्य और संबंध को सरलता और संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया गया है।

मिच एल्बॉम अपने जीवन में एक सफल व्यक्तित्व के रूप में प्रतिष्ठित हैं, किंतु उन्हें यह अनुभूति होती है कि सफलता की ऊँचाईयों पर पहुँचने के पश्चात् कई पुराने संबंधों की डोर ढीली पड़ गई है। कॉलेज के मित्र अब भिन्न-भिन्न नगरों में अपने-अपने जीवन की व्यस्तताओं में रमे हुए हैं और वह आत्मीयता जो कभी साझा की गई थी, अब स्मृतियों में सिमट गई है।

यह सफलता मिच एल्बॉम को एक दिन में नहीं मिली, इसके पीछे अनेक असफल प्रयासों, टूटे हुए स्वप्नों और संघर्षों की लंबी शृंखला रही। उन्होंने जीवन में आगे बढ़ने का संकल्प तब लिया जब उन्होंने अपने पाँच वर्षीय भांजे को कैंसर जैसी क्रूर बीमारी के कारण खो दिया।

इस हृदयविदारक घटना के बाद उन्होंने जीवन को एक नई दृष्टि से देखना शुरू किया। वे और अधिक परिश्रम करने लगे, दिन-रात काम में डूबे रहे, धन अर्जित करने और संपत्तियाँ जुटाने में लग गए। उन्हें प्रतीत हुआ कि यही भौतिक उपलब्धियाँ ही सच्ची प्रसन्नता का मार्ग है। परंतु भीतर कहीं एक रिक्तता थी, जो इन उपलब्धियों के शोर में भी मौन पुकारती रही। फिर उनके अंतर्मन ने उन्हें यह एहसास कराया कि जीवन की नश्वरता के बीच कुछ ऐसा रचनात्मक कार्य करूँ, जो स्थायी हो - तथा दूसरों के जीवन को छू सके।

फिर एक दिन, यूँ ही टेलीविजन के चैनल बदलते-बदलते मिच एल्बॉम की दृष्टि एक परिचित चेहरे पर ठहर गई। वह उनके पुराने कॉलेज के प्राध्यापक मॉरी थे, जिनका साक्षात्कार प्रसारित हो रहा था। वे व्हीलचेयर पर विराजमान थे, उनके पास एक सहायक उनकी देखभाल में तत्पर था। बीमारी से उनकी टाँगों ने जवाब दे दिया था। वे जीवनभर चलने की स्थिति में नहीं थे, परंतु उन्होंने पीड़ा को अपना परिचय नहीं बनने दिया, उन्होंने दुख से हारने के बजाय विचारों की शक्ति को अपनाया।

उन्होंने जीवन के अनुभवों, शिक्षाओं और विचारों को जहाँ भी स्थान मिला लिफाफों, डायरी के पन्नों, फोल्डरों और रद्दी कागजों पर उकेरना

शुरू कर दिया। उनके मित्रों ने इन विचारों को शब्दों का रूप दिया और उनकी जीवनगाथा को एक शीर्षक प्रदान किया: *'A Professor's Final Course: His Own Death'*। यह एक ऐसी विरासत थी, जो मृत्यु के द्वार पर खड़े एक शिक्षक द्वारा जीवन को समझने और सिखाने की अंतिम कोशिश थी।

मिच एल्बॉम जब अपने पुराने अध्यापक प्रोफेसर मॉरी को टेलीविजन पर एक व्हीलचेयर पर बैठे, जीवन की अंतिम अवस्था में देखते हैं, तो उनके भीतर वर्षों पुराना संबंध फिर से जीवंत हो उठता। वे उनसे मिलने उनके घर जाते हैं और यहीं से आरंभ होती ट्यूज़डेज़ विद मॉरी की आत्मीय यात्रा-हर मंगलवार को जीवन की गहराइयों में उतरने की एक कक्षा।

हर मंगलवार, प्रोफेसर मॉरी मिच को जीवन की उन शिक्षाओं से परिचित कराते हैं जिन्हें कोई पाठ्यपुस्तक नहीं सिखा सकती, यह एक ऐसी कक्षा है जहाँ विषय होता है जीवन और मृत्यु। पहले मंगलवार को चर्चा होती है इस संसार की प्रकृति पर, दूसरे मंगलवार को स्वयं के प्रति क्षमा और संवेदना पर, क्योंकि हम अक्सर अपने आप को वह सहानुभूति नहीं देते, जिसके हम पात्र हैं। तीसरे मंगलवार को विषय होता है – खेद और पछतावे की भावना।

इन साप्ताहिक संवादों के बीच प्रोफेसर मॉरी की तबीयत धीरे-धीरे बिगड़ती जाती है, पर वे हर क्षण को एक अवसर की तरह जीते हैं। वे अपने अनुभवों, विचारों और जीवन के तत्वज्ञान को मिच के साथ एक ऐसी विरासत के रूप में साझा करते हैं, जो अस्तित्व की संध्या में खड़े एक शिक्षक के हृदय में जीवन के अज्ञात रहस्यों को समझने की अंतिम जाग्रत जिजीविषा है।

यह पुस्तक वर्ष 1997 में प्रकाशित हुई थी और शीघ्र ही एक प्रसिद्ध जीवन-वृत्तांत के रूप में विश्वभर में चर्चित हो गई। ट्यूज़डेज़ विद मॉरी ने न केवल मिच एल्बॉम के जीवन को दिशा दी, बल्कि असंख्य पाठकों को भी जीवन की सच्ची राह दिखाने का कार्य किया। यह पुस्तक एक दर्पण की तरह है, जो हमें हमारे अस्तित्व, संबंधों और मूल्यों की झलक दिखाती है।

हर व्यक्ति को इसे अवश्य पढ़ना चाहिए, क्योंकि यह केवल एक कहानी नहीं, बल्कि जीवन के अर्थ की खोज है।

''सभी भारतीय भाषाओं के लिए यदि कोई एक लिपि आवश्यक है तो वह देवनागरी ही हो सकती है''

- जस्टिस कृष्णस्वामी अय्यर

अखिल भारतीय निबंध प्रतियोगिताओं में यूको बैंक के कार्मिकों को पुरस्कार

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड			
विषय: भारत की बढ़ती अर्थव्यवस्था में सरकारी बीमा कंपनियों का योगदान			
कुमार संतोष	वरिष्ठ प्रबंधक, अंचल कार्यालय, दुर्गापुर	द्वितीय	हिंदी भाषी वर्ग
आशिमा मैनी	वरिष्ठ प्रबंधक, अंचल कार्यालय, नई दिल्ली	तृतीय	हिंदी भाषी वर्ग
हेमा भाटिया	वरिष्ठ प्रबंधक, अंचल कार्यालय, करनाल	द्वितीय-प्रोत्साहन	हिंदी भाषी वर्ग
पंजाब नैशनल बैंक			
विषय: एआई (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) के उपयोग से भारतीय भाषाओं का विकास एवं प्रसार एआई (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) के उपयोग से भावी भारतीय बैंकिंग परिदृश्य			
कुमार संतोष	वरिष्ठ प्रबंधक, अंचल कार्यालय, दुर्गापुर	प्रथम	मातृभाषा वर्ग 'क'

बाल वीथिका

प्रियांशु
सुपुत्र- श्री नीरज
सहायक महाप्रबंधक
अंचल कार्यालय, भुवनेश्वर

नविनीश्री
सुपुत्री- श्रीमती अभिरामी एस.
वरिष्ठ प्रबंधक
आरएलपीएस हब, कोयंबतूर

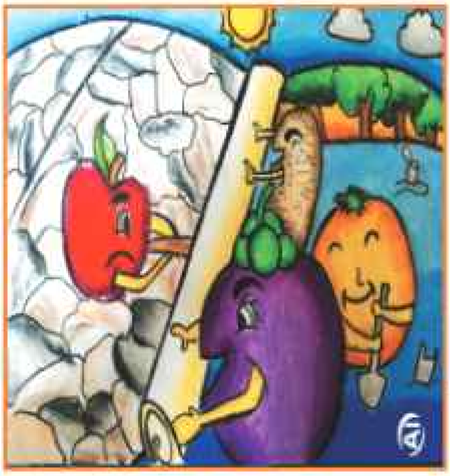

तनुश्री
सुपुत्री- श्रीमती अभिरामी एस.
वरिष्ठ प्रबंधक
आरएलपीएस हब, कोयंबतूर

अभिज्ञा तिवारी
सुपुत्री- श्री राम अभिषेक तिवारी
प्रबंधक (राजभाषा)
अंचल कार्यालय, बेगूसराय

अनुराधा कुशवाहा

परंपरा के स्वाद में लिपटा - गेहूं के आटे और चना दाल का फरा

उत्तर भारत का पारंपरिक एवं पौष्टिक व्यंजन फरा स्वाद में अनुपम है, अपितु स्वास्थ्यवर्धक गुणों से भी परिपूर्ण है। सर्दियों के मौसम में यह हल्का, सुपाच्य एवं ऊर्जा प्रदान करने वाला भोजन प्रत्येक घर की रसोई में विशेष रूप से तैयार किया जाता है। आइए जाने इसे बनाने की सरल विधि:

❖ फरा बनाने की सामग्री

⏩ आटे के लिए

- गेहूं का आटा 2 कप
- नमक स्वादानुसार
- पानी आवश्यकतानुसार
- तेल थोड़ा सा (गूंथने के लिए)

❖ भरावन (स्टफिंग) के लिए

- चना दाल- 1 कप (4-5 घंटे भिगोई हुई)
- लहसुन- 3-4 कलियाँ
- हरी मिर्च - 2
- जीरा - 1 छोटा चम्मच
- हींग - 1 चुटकी
- नमक - स्वादानुसार
- हरा धनिया- बारीक कटा हुआ

⏩ तड़के के लिए

- तेल-2-3 बड़ा चम्मच
- राई-1/2 छोटा चम्मच
- जीरा-1/2 छोटा चम्मच
- करी पत्ता- 8-10 पत्तियां

❖ विधि-

⏩ भरावन तैयार करना

1. सबसे पहले भिगोई हुई चना दाल का पानी निथार लें।
2. मिक्सर में चना दाल, लहसुन की कलियाँ, हरी मिर्च और जीरा डालकर दरदरा पीस लें।
3. अब इसमें हींग, नमक और हरा धनिया डालकर अच्छी तरह मिला लें।

⏩ आटा तैयार करना

1. गेहूं के आटे में स्वादानुसार नमक और थोड़ा सा तेल डालें।
2. आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर आटे को अच्छी तरह से मुलायम गूंथ लें।
3. गुंथे हुए आटे को ढककर लगभग 10 मिनट के लिए रख दें, ताकि यह सेट हो जाए।

⏩ फरे बनाना

1. गुंथे हुए आटे की एक लोई लें और उसे बेलकर चपटा कर लें।
2. बीच में तैयार भरावन (चना दाल मिश्रण) रखें।
3. किनारों को मोड़कर अच्छी तरह बंद करें, आप चाहे तो इसे गुजिया के आकार में बना सकते है या रोल के रूप में भी तैयार कर सकते हैं।
4. इसी प्रकार सभी फरे तैयार कर लें।

⏩ फरे भाप में पकाना

1. एक स्टीमर या बड़ी छलनी वाले बर्तन में पानी उबालें।
2. तैयार किए गए फरे उसमें सावधानीपूर्वक रखें और ढक्कन

लगाकर ढ़क दें।

3. मध्यम आँच पर लगभग 15-20 मिनट तक भाप में पकाएँ।

4. जब फरे हल्के पारदर्शी और सख्त दिखने लगे, तो समझिए वे पूरी तरह पक चुके है।

तड़का लगाना

- स्टीम किए हुए फरे को ठंडा होने दें और फिर उन्हें मनचाहे आकार के टुकड़ों में काट लें।
- एक कड़ाही में तेल गरम करें और उसमें राई डालें।
- जब राई चटकने लगे, तब उसमें जीरा और करी पत्ता डालें।
- अब फरे के टुकड़े डालें और उन्हें हल्का सुनहरा व कुरकुरा होने तक मध्यम आँच पर सेंकें।
- तड़का लगे फरे अब मनमोहक खुशबू और स्वाद के साथ परोसने के लिए तैयार है।

परोसने का सुझाव

- इन्हें हरी धनिया की चटनी, टमाटर की तीखी चटनी या ताजे दही के साथ गरमा-गरम परोसें।

यह व्यंजन त्यौहारों के अवसर पर, उपवास के बाद या सर्द शामों में परोसने के लिए अत्यंत उपयुक्त है।

खास टिप

यदि आप कम तेल में फरे बनाना चाहते हैं, तो इन्हें केवल स्टीम करके भी परोसा जा सकता है। यह विकल्प न केवल अधिक स्वास्थ्यवर्धक है, बल्कि स्वाद में भी उतना ही लाजवाब लगता है।

"हिंदी का प्रचार और विकास कोई रोक नहीं सकता"

- पंडित गोविंद बल्लभ पंत

प्रधान कार्यालय की गतिविधियाँ

संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उपसमिति द्वारा अंचल कार्यालय, नई दिल्ली का निरीक्षण

संसदीय राजभाषा समिति की आलेख एवं साक्ष्य उपसमिति द्वारा नरकास (बैंक), कोलकाता का निरीक्षण, प्रमाण-पत्र ग्रहण करते श्री विजयकुमार निवृत्ति कांबले, कार्यपालक निदेशक

पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन में बैंक द्वारा लगाई गई प्रदर्शनी पर बैंक के कार्यपालक निदेशक श्री विजयकुमार निवृत्ति कांबले

पंचम अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन में बैंक द्वारा लगाई गई प्रदर्शनी पर बैंक के मुख्य महाप्रबंधक श्री राजेश नागर

हिंदी माह प्रतियोगिता - प्रधान कार्यालय

हिंदी माह प्रतियोगिता - प्रधान कार्यालय

प्रधान कार्यालय की गतिविधियाँ

राजभाषा कीर्ति पुरस्कार – यूको अनुगूंज

नराकास राजभाषा सम्मान – द्वितीय

नराकास प्रोत्साहन सम्मान – सर्वोत्कृष्ट

विकसित भारत @ 2047- पुस्तक विमोचन

सर्वोच्च राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक

नराकास (बैंक), कोलकाता के तत्वावधान में संगोष्ठी सह प्रतियोगिता का आयोजन

अंचल/नराकास कार्यालयों की गतिविधियाँ

नराकास प्रोत्साहन सम्मान – नराकास, बालेश्वर-सर्वोत्कृष्ट
(संयोजक : अंचल कार्यालय, बालेश्वर)

नराकास प्रोत्साहन सम्मान – नराकास, नाहन (सिरमौर)
(संयोजक : अग्रणी जिला प्रबंधक कार्यालय, नाहन)

नराकास प्रोत्साहन सम्मान – नराकास, अजमेर
(संयोजक : अंचल कार्यालय, अजमेर)

नराकास प्रोत्साहन सम्मान – नराकास, भागलपुर
(संयोजक : अंचल कार्यालय, भागलपुर)

नराकास प्रोत्साहन सम्मान – नराकास, बिलासपुर
(संयोजक : अग्रणी जिला प्रबंधक कार्यालय, बिलासपुर)

हिंदी पत्राचार प्रोत्साहन पुरस्कार 2024-25
(अंचल कार्यालय, चंडीगढ़)

जी. डी. बिड़ला राजभाषा शील्ड योजना, वित्तीय वर्ष 2024-25 के विजेता

अंचल/कार्यालय की गतिविधियाँ

हिंदी माह- पुरस्कार वितरण कार्यक्रम
(अंचल कार्यालय, सॉल्टलेक)

नराकास राजभाषा शील्ड – प्रोत्साहन, पत्रिका – तृतीय पुरस्कार
(अंचल कार्यालय, पटना)

यूको राजभाषा सम्मान – अंचल कार्यालय, भोपाल

यूको राजभाषा सम्मान – अंचल कार्यालय, सूरत

राजीव कुमार नायक

"यूको अनुगूँज" का नवीन अंक कृत्रिम बुद्धिमत्ता बनाम मानव संसाधन जैसे जटिल विषय को सरलता और गहराई से प्रस्तुत करता है। प्रो. सुदेष्णा सरकार (आई.आई.टी. खड़गपुर) का साक्षात्कार अत्यंत ज्ञानवर्धक है, जो इस विषय पर नई दृष्टि प्रदान करता है। साथ ही, पुस्तक समीक्षा पाठकों को न केवल पुस्तक को पढ़ने के लिए प्रेरित करती है, बल्कि उसके मर्म को समझने में भी सहायक है। पत्रिका में प्रस्तुत लेख, विचार और विश्लेषण आज के संदर्भ में अत्यंत प्रासंगिक, प्रेरणादायक और मार्गदर्शक हैं। भविष्य में भी ऐसे ही उपयोगी अंकों की प्रतीक्षा रहेगी।

"यूको अनुगूँज" का कृत्रिम बुद्धिमत्ता बनाम मानव संसाधन पर आधारित विशेषांक एक सारगर्भित और समसामयिक प्रस्तुति है। आज के तकनीकी युग में जहाँ एआई मानव संसाधन को सशक्त बनाने का माध्यम बन रहा है, पत्रिका ने इस विषय को संतुलन और गहराई से प्रस्तुत किया है। लेखों की गंभीरता, कविता व कला बाल-वीथिका की भावनात्मकता और प्रवाहमयी भाषा इसे पठनीय और प्रेरणादायक बनाती है। बैंकिंग जगत से जुड़े समसामयिक आर्थिक विषयों पर पत्रिका की निरंतरता निश्चित ही सराहना के योग्य है।

गजराज देवी सिंह ठाकुर

आशुतोष सिंह

"यूको अनुगूंज" का नवीनतम अंक 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता बनाम मानव संसाधन' जैसे समसामयिक विषय पर केंद्रित है, जो आज के तकनीकी युग की ज्वलंत चुनौतियों और संभावनाओं को उजागर करता है। पत्रिका में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के विविध पहलुओं का संतुलित विवेचन किया गया है, जिससे यह अंक न केवल ज्ञानवर्धक बल्कि संग्रहणीय भी बन गया है। 'एक मुलाकात' स्तंभ में डॉ. सुदेष्णा सरकार का साक्षात्कार विषय की गहराई को और भी स्पष्ट करता है। साथ ही साहित्य की अन्य विधाओं, कविता, बाल-वीथिका आदि को स्थान देकर पत्रिका ने भावनात्मक और साहित्यिक समृद्धि भी सुनिश्चित की है। सरल और प्रवाहमयी भाषा में प्रस्तुत यह अंक पाठकों को सहजता से जोड़ता है। समसामयिक विषयों पर पत्रिका की निरंतरता निश्चित ही प्रशंसा के योग्य है।

"यूको अनुगूँज" का अप्रैल–जून 2025 विशेषांक 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता बनाम मानव संसाधन' जैसे समयसापेक्ष विषय पर केंद्रित है, जो तकनीकी बदलावों के बीच मानव संसाधन की भूमिका को समझने का एक महत्वपूर्ण प्रयास है। यह अंक न केवल एक विचारशील संवाद की शुरुआत करता है,बल्कि बैंकिंग और साहित्य के विविध पक्षों जैसे आलेख, साक्षात्कार, पुस्तक समीक्षा, कविताएँ, यात्रा-वृत्तांत, बाल-वीथिका और भोजनम् को भी समाहित करता है। सरल भाषा और समृद्ध सामग्री के साथ यह अंक ज्ञानवर्धक और संग्रहणीय बन गया है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता और मानव संसाधन पर भविष्य में और सामग्री की प्रतीक्षा रहेगी।

अभिजीत कुमार गिरी

नेहा साव

"यूको अनुगूँज" का अप्रैल–जून 2025 अंक 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता बनाम मानव संसाधन' जैसे समसामयिक विषय पर केंद्रित एक शोधपरक और सुगठित प्रस्तुति है। यह अंक तकनीकी नवाचारों के बीच मानव संसाधन की बदलती भूमिका को समझने का एक सार्थक प्रयास है। श्रीमती रचना कुमारी चौधरी का लेख विषय की गहराई को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। पत्रिका में प्रकाशित आलेख, साक्षात्कार, कविताएँ (जिंदगी की बैंकिंग), यात्रा-वृत्तांत, बाल-वीथिका और भोजनम् जैसे विविध रचनात्मक आयाम इसे ज्ञानवर्धक और मनोरंजक बनाते हैं। सरल भाषा और प्रभावशाली शैली के साथ यह अंक निश्चित रूप से प्रशंसा के योग्य है।

"यूको अनुगूँज" का प्रत्येक अंक एक नवीन और प्रासंगिक विषय को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है। अप्रैल–जून 2025 का विशेषांक 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता बनाम मानव संसाधन' विषय पर केंद्रित है, जो आज के दौर में अत्यंत रोचक और विचारोत्तेजक है। पत्रिका में समाहित रचनाएँ जैसे कविता, व्यंजन विधि, यात्रा-वृत्तांत आदि इसकी रोचकता और विविधता को और भी बढ़ाते हैं। यह अंक न केवल सूचनात्मक है, बल्कि पाठकों को विषय की गहराई से जोड़ने में भी सफल रहा है। आशा है कि यूको अनुगूँज भविष्य में भी इसी तरह प्रासंगिक विषयों के साथ प्रकाशित होती रहेगी।

सरोजिका एस

नेहा मिश्रा

"यूको अनुगूँज" का नवीन अंक (अप्रैल–जून 2025) हाथों में लेते ही गर्व और प्रसन्नता की अनुभूति होती है। यह केवल एक पत्रिका नहीं, बल्कि यूको परिवार की सृजनशीलता और संवेदना का जीवंत दस्तावेज है। सामयिक विषय पर आधारित यह अंक तकनीकी युग में मानवीय मूल्यों को केंद्र में रखकर विचारोत्तेजक संवाद प्रस्तुत करता है। विविध रचनात्मक आयामों-कविता, यात्रा-वृत्तांत, व्यंजन विधि, बाल-वीथिका, भोजनम् आदि से समृद्ध यह अंक साहित्यिक दृष्टि से भी उल्लेखनीय है। राजभाषा हिंदी अब यूको परिवार की अभिव्यक्ति की आत्मा बन चुकी है। संपादक मंडल एवं सभी रचनाकारों को हार्दिक बधाई।

व्हेयर द माइंड इज विदाउट फियर

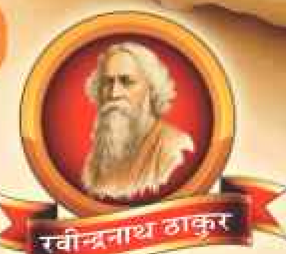

परिचय

विश्वविख्यात कवि, साहित्यकार, दार्शनिक और भारतीय साहित्य के एकमात्र नोबेल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म 7 मई, 1861 को जोड़ासाँको ठाकुरबाड़ी में हुआ। रवीन्द्रनाथ टैगोर की स्कूल की पढ़ाई प्रतिष्ठित सेंट जेवियर स्कूल में हुई। टैगोर ने बैरिस्टर बनने की चाहत में 1878 में इंग्लैंड के ब्रिजटोन पब्लिक स्कूल में नाम दर्ज कराया। उन्होंने लंदन कॉलेज विश्वविद्यालय में कानून का अध्ययन किया लेकिन 1880 में बिना डिग्री हासिल किए ही वापस आ गए।

बाल्यकाल से ही भावनाओं की वीणा पर शब्दों का संगीत रचने वाले रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने आठ वर्ष की उम्र में पहली कविता लिखी और सोलह की आयु में साहित्य जगत में अपनी पहली लघुकथा से दस्तक दी। उनकी लेखनी ने उपन्यासों, निबंधों, नाटकों, यात्रावृत्तों और सहस्रों गीतों का सृजन किया। इतिहास, भाषाविज्ञान और आध्यात्मिकता पर भी उन्होंने विचारों की अमूल्य धरोहर छोड़ी। यूरोप के पत्रों से लेकर 'मनुष्य का धर्म' तक और आइंस्टीन संग 'वास्तविकता की प्रकृति' पर संवाद उनकी रचनाएं केवल शब्द नहीं, विचारों की यात्रा थीं। वर्ष 1912 में रवीन्द्रनाथ टैगोर ने विदेशों की यात्रा की और यूरोप, अमेरिका व पूर्वी एशिया में व्याख्यान व काव्य-पाठ के माध्यम से भारत की स्वतंत्रता की मुखर आवाज बने। उनके प्रसिद्ध उपन्यासों में गोरा और घरे-बाइरे विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

वर्ष 1920 के दशक में रवीन्द्रनाथ टैगोर ने रंगों की दुनिया में प्रवेश किया और अपनी चित्रकला से भारतीय कला के क्षितिज पर एक नई पहचान बनाई। उनकी कविताओं की पांडुलिपि सबसे पहले विलियम रोथेनस्टाइन ने पढ़ी, जो इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने अंग्रेजी कवि डब्ल्यू. बी. यीट्स को इससे परिचित कराया। यीट्स ने न केवल अनुवादों को सँवारा, बल्कि टैगोर को पश्चिमी साहित्यिक और बौद्धिक जगत से जोड़ने में अहम भूमिका निभाई। इंडिया सोसायटी ने टैगोर की कविताओं का प्रकाशन किया और मार्च 1913 में मेकमिलन एंड कंपनी ने इसे प्रकाशित किया। नोबेल पुरस्कार की घोषणा से पहले ही इसके दस संस्करण छप चुके थे।

टैगोर की 150वीं जयंती पर उनके कार्यों का भव्य संकलन कालानुक्रमिक रवीन्द्र रचनावली प्रकाशित हुआ, जिसमें लगभग अस्सी संस्करण शामिल है। 2011 में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस और विश्व-भारती विश्वविद्यालय ने मिलकर द एसेंशियल टैगोर का प्रकाशन किया, जिसे फकरुल आलम और राधा चक्रवर्ती ने संपादित किया।

वे एकमात्र कवि है, जिनकी दो रचनाएं दो देशों का राष्ट्रगान बनीं। भारत का राष्ट्र-गान 'जन गण मन' और बांग्लादेश का राष्ट्रीय गान 'आमार सोनार बांग्ला' गुरुदेव की ही रचनाएँ है। अपने जीवन के अंतिम वर्षों में भी टैगोर लेखन और सामाजिक कार्यों में सक्रिय रहे।

निधन: 7 अगस्त, 1941

जहाँ मन हो निर्भय और मस्तक ऊँचा रहे,
जहाँ ज्ञान की निर्मल गंगा, सबके लिए बहे।
जहाँ न हों सीमाएँ संकीर्ण सोच की,
न बँटे हो विश्व दीवारों की खोज में।

जहाँ शब्द हों सत्य की गहराइयों से निसृत,
और श्रम हो अनथक, पूर्णता की ओर अग्रसर।
जहाँ बुद्धि की निर्मल धारा बहती रहे,
ना भटके जड़ परंपरा की शुष्क रेत में।

जहाँ विचार हो विस्तृत, क्रिया हो साहसी,
और तू, हे प्रभु, कर रहा हो पथप्रदर्शन।
उसी स्वर्ग से भी सुंदर स्वतंत्रता के भोर में,

मेरे भारत को जगा दे —
हे पिता, उस स्वप्निल प्रभा में,
मेरे देश को तू नवचेतना दे।

यह कविता एक ऐसे स्वप्निल राष्ट्र की कल्पना है, जहाँ मनुष्य का मन भय से मुक्त हो और विचारों की उड़ान आकाश की ऊँचाइयों को छू सके। जहाँ ज्ञान की सरिता निर्बाध बहती रहे और संकीर्णता की दीवारें मानवता को विभाजित न करें। कवि उस भूमि की कामना करते है जहाँ सत्य की खोज में श्रम हो, कर्म में उत्कृष्टता हो और विचारों में विवेक का आलोक हो। यह एक ऐसी प्रार्थना है जिसमें राष्ट्र की आत्मा को अंधविश्वास और जड़ता से मुक्त कर तर्क और चेतना की ओर अग्रसर करने की पुकार है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की यह रचना एक उज्ज्वल, निर्भय और समरस भारत के निर्माण की भावनात्मक अभिव्यक्ति है, जो आज भी उतनी ही प्रासंगिक और प्रेरणादायक है।

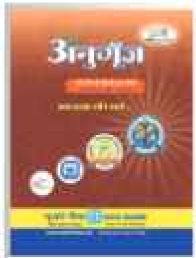

रचनात्मक प्रकाशन

प्रधान कार्यालय स्तर पर प्रकाशित